१ तीमुथियुस
(1 Timothy)

१ तीमुथियुस (1 Timothy)

१ **पौलुस** जो हमारे मुक्तिदाता यहोवा, और हमारी आशा मसीह यीशु, की आज्ञा से मसीह यीशु का प्रेरित है, उनकी ओर
२ से, तीमुथियुस के नाम जो विश्वास में मेरा सच्चा पुत्र है, पिता परमेश्वर, **और** हमारे प्रभु मसीह यीशु की ओर से तुम्हें
३ असीम दया और शान्ति मिलती रहे। **जैसे** मैंने मकिदुनिया को जाते समय तुम्हें समझाया था, कि इफिसुस में रहकर कई
४ लोगों को आज्ञा दों कि और दूसरी कोई शिक्षा न दें । **उन** ऐसी कहानियों और अनगिनत वंशावलियों पर अपना ध्यान न
लगाएं, जिनसे झगड़े होते हैं, जो परमेश्वर की उस योजना के अनुसार नहीं, जो विश्वास से सम्बन्ध रखती हैं; वैसे ही फिर
५,६ भी कहता हूँ । **आज्ञा** का निचोड़ यह है कि शुद्ध मन, अच्छे विवेक और कपटरहित विश्वास से प्रेम उत्पन्न हो। **इनको** छोड़कर
७ कई लोग फिरकर बेकार की बातों की ओर भटक गए हैं। **वे** धार्मिक शिक्षक तो बनना चाहते हैं, परंतु जो बातें कहते और

अध्याय १

१:१,२ - ***"प्रेरित"*** - रोमि. १:१; गल. १:१ ।

"मुक्तिदाता" - यहाँ पौलुस कहता है कि परमेश्वर हमारे उद्धारकर्ता हैं। (तीतुस २:१३) और दूसरे स्थानों में वह कहता है कि यीशु हमारे उद्धारकर्ता हैं। एक बार फिर से क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं कि यीशु मसीह परमेश्वर हैं? यशा. ४४:११ देखें। अन्य पदों को देखें जिनसे यह मालूम होता है कि यीशु परमेश्वर हैं (फिलि. २:६)।

"आशा" - विश्वास के अंतिम उद्धार के आश्वासन का एकमात्र आधार मसीह ही है। (कुलु. १:२६; रोमियों ५:२)।

१:२ - ***"तीमुथियुस"*** - प्रे. काम १६:१।

"पुत्र" - आत्मिक पुत्र न कि शारीरिक ।

"असीम दया" - साधारणतया पौलुस 'अनुग्रह और शान्ति' (रोमियों १:७ आदि) लिखता है। केवल तीमुथियुस को लिखे दो पत्र और तीतुस को लिखे पत्र में वह शब्द दया को जोड़ देता है। मसीह की सेवा में तीमुथियुस और तीतुस दोनों पूरे समय लगे हुए थे। क्या दूसरों की तुलना में इन लोगों को दया की अधिक आवश्यकता है? याकूब ३:१ देखें ।

"हमारे प्रभु" - लूका २:११; फिलि. २:१०,११ के नोट्स देखें।

१:३ - इससे यह मालूम होता है कि तीमुथियुस इफिसुस की मण्डली में अगुवा था और शायद मुख्य अगुवा था (कलीसिया सम्बंन्धित बातों के विषय में वह केवल इसी को लिखता है)। उसे इस बात का अधिकार था कि वह मण्डली में गलत शिक्षा को मना करे।

"कोई और शिक्षा" का अर्थ उस शिक्षा से है, जो मसीह द्वारा प्रेरितों पर प्रगट किए गए सत्य के विरोध में थी। जो अधिकार परमेश्वर ने प्रेरितों को दिया था, उसके कारण प्रेरितों ने इस सत्य को सिखाया था। इस पर विश्वास करना सभी विश्वासियों के लिये आवश्यक भी था (गल. ४:१६; गल. १:६-१२; रोमियों ६:१७ और यहूदा ३ से तुलना करें) ।

परमेश्वर ने पासबानों और अगुवों को ठहराया है कि वे मण्डली की देखभाल करें (प्रे. काम २०:२८-३१)। उनको उस परमेश्वर के सत्य के विरोध में जो उसने सिखाने के लिये दिया है, अनुमति नहीं देनी चाहिए। यदि वे देते हैं तो विश्वास के प्रति गद्दार हैं, जिससे कलीसियाओं को बड़ी हानि होती है। जिस प्रकार उस समय के विश्वासी प्रेरितों की शिक्षा के प्रति समर्पित थे, आज के मसीहियों को समर्पित होना चाहिए (प्रे. काम २:४२)। तीतुस और तीमुथियुस को लिखे गए तीन पत्रों में सही सिद्धान्तों और शिक्षा पर ज़ोर डाला गया है - पद १०; ४:६,१३,१६; ५:१७; ६:१,३; २ तीमु. ३:१०,१६; ४:२,३; तीतुस १:६; २:१,७,१० देखें ।

१:४ - ***"कहानियों और अनगिनित वंशावलियों"*** - ऐसी खोखली कहानियाँ और वंशावलियाँ (शायद यहूदी) जो कि बाइबिल में नहीं हैं उनकी ओर पौलुस संकेत कर रहा है। तीतुस १:१४ से तुलना करें। ऐसी शिक्षाएँ पृथ्वी पर परमेश्वर के कार्य के लिये सहायक नहीं हैं। परमेश्वर का कार्य केवल उन्हीं लोगों के द्वारा हो सकता है, जो उनके वचन पर विश्वास करते हैं और दूसरों को उनके विषय में सिखाते हैं ।

१:५ - ***"प्रेम"*** - पौलुस उस यूनानी शब्द का उपयोग करता है जिसे परमेश्वर अपने लोगों से चाहते हैं और उन्हें देते है (**अगापे)** १ कुरि. १३:१)। प्रत्येक विश्वासी का यह लक्ष्य होना चाहिए कि वह ऐसा प्रेम करे जैसा मसीह ने किया (यूहन्ना १३:३४ आदि)। यह मात्रा मनुष्य की भावना नहीं है, न ही इसका सम्बन्ध अशुद्धता या स्वार्थ की इच्छा से है।

"शुद्ध हृदय" - मत्ती ५:८; १ पतरस १:२२।

"शुद्ध विवेक" - पद १६; ३:६; प्रे. काम २३:१; २४:१६। ४:२ से तुलना करें।

"निष्कपट विश्वास" - गल ५:६; १ कुरि. २:४,५। यह बहाना बनाने वाले विश्वास से भिन्न हैं जो कपटी लोगों के पास होता है। पौलुस के अनुसार इन तीनों बातों के बगैर, जैसा प्रेम होना चाहिए, नहीं होगा। यहाँ तक कि उसे प्रेम कहना भी उचित नहीं।

१:६ - पाँचवें पद में हमें मसीही विश्वास की मुख्य बात दिखती है जिसे परमेश्वर चाहते हैं कि उनके लोग अनुभव करें। यह खेद की बात हैं कि आज बहुत से वे मसीही, जो मसीही होने का दावा करते हैं, व्यर्थ बातों की ओर मुड़ते हैं, और इन महत्वपूर्ण बातों को हल्का-पुल्का समझते हैं।

१:७ - ***"धार्मिक शिक्षक तो बनना चाहते हैं"*** - वे मनुष्यों के द्वारा आदर चाहते हैं। मत्ती २३:५-१२; अय्यूब ३:१। वे आत्मिक सच से अनजान हैं किन्तु चाहते यह हैं कि दूसरे लोग उन्हें बुद्धिमान समझें। कुछ लोग कितने आत्मविश्वास और साहस से उन विषयों के सम्बन्ध में बोलते हैं, जिनके बारे में उन्हें बहुत कम ज्ञान है।

८ जिनको दृढ़ता से बोलते हैं, उनको समझते भी नहीं। **परंतु** हम जानते हैं कि यदि कोई नियम शास्त्र को नियम शास्त्र की रीति
९ पर काम में लाए, तो वह भला है। **यह** जानकर कि नियम शास्त्र विश्वासी के लिए नहीं, परंतु अधर्मियों, मनमाना आचरण
१० करनेवालों, भक्तिहीनों, पापियों, अपवित्र और अशुद्ध लोगों, मां-बाप का घात करनेवालों, हत्यारों, **व्यभिचारियों,** पुरुषगामियों,
मनुष्य के बेचनेवालों, झूठों, और झूठी शपथ खानेवालों, और इनको छोड़ खरे उपदेश के सब विरोधियों के लिए ठहराया गया
११,१२ हैं । **यही** परमधन्य परमेश्वर की महिमा के उस शुभ-सन्देश के अनुसार है, जो मुझे सुपुर्द गया है। **मैं,** अपने प्रभु मसीह यीशु
१३ का, जिन्होंने मुझे सामर्थ दी है, धन्यवाद करता हूं कि उन्होंने मुझे विश्वासयोग्य समझकर अपनी सेवा के लिए ठहराया। **मैं**
तो पहले निन्दा करनेवाला, सतानेवाला, और अन्याय करनेवाला था; तौभी मुझ पर दया हुई, क्योंकि मैंने अविश्वास की दशा
१४ में बिन-समझे बूझे, ये काम किए थे। **हमारे** प्रभु की महान कृपा उस विश्वास और प्रेम के साथ जो मसीह यीशु में है, मुझ
१५ पर बहुतायत से हुई । **यह** बात सच और हर प्रकार से स्वीकार करने के योग्य है कि मसीह यीशु पापियों को मुक्ति देने

१:८ - ***"नियम भले हैं"*** - रोमियों ७:१२। यह लोगों के लाभ के लिये परमेश्वर द्वारा दी गई है। यहाँ नियम का अर्थ है वह रीति, नियम या विधियाँ जो मूसा द्वारा दिए गए हैं (निर्ग. अध्याय २)। वे भले हैं, किन्तु उद्धार का मार्ग नहीं हैं, न ही वे पवित्र जीवन के लिये यह बल प्रदान करती है। लोगों के मुँह बंद करने के लिये परमेश्वर इसका उपयोग करते हैं (रोमियों ३:१९,२०)। उन्हें यह महसूस कराने के लिये कि उन्हें यीशु की उद्धारकर्ता के रूप में आवश्यकता है (गल ३:२४,२५)। उन्हीं के द्वारा इसे भला बनाया जा सकता है, जबकि दूसरे अन्य कारण हैं। यदि न भी होते, तब भी। मसीह के सेवकों को इसे वैसे ही उपयोग करना चाहिए, जैसे परमेश्वर करते हैं।

१:९,१० - ***"धर्मी जन"*** - पौलुस उन लोगों की ओर इशारा करता है जो मसीह में विश्वासी हैं और परमेश्वर की इच्छानुसार जीते हैं। उन्हें नियमशास्त्र की आवश्यकता नहीं कि वह उन्हें कायल करे, रोके, या दण्ड दे। जैसा परमेश्वर चाहते हैं, वे भी चाहते हैं कि नियमशास्त्र की धार्मिकता उनमें पूरी हो (रोमियों ८:४)। दुष्ट व्यक्ति की बात अलग है।

"खरे उपदेश" - पद ३।

१:११ - यह देखें कि खरे उपदेश से उसका अर्थ क्या है। सही शिक्षा मसीह के सन्देश की पुष्टि करेगी, गलत शिक्षा इसके विपरीत होगी ।

"महिमा के उस सुसमाचार" - २ कुरि. ४:४ से तुलना करें। मरकुस १:१; १ कुरि. १५:१-८ में सुसमाचार पर नोट्स देखें ।

"परमधन्य परमेश्वर" - ६:१५ असीमित मात्रा में उनके पास शान्ति, आनंद और पवित्रता आदि है, जो वह चाहते हैं कि लोग मसीह में अनुभव करें ।

''जो मुझे" - १ कुरि. ९:१७; गल. २:७ ।

१:१२-१७-पौलुस बताता है कि महिमा के शुभसन्देश ने उसके जीवन में कैसे कार्य किया, और धन्यवाद एवं प्रशंसा उस परमेश्वर को देता है जिनका सुसमाचार यह है। वह अपने जीवन में जानता था कि सुसमाचार उद्धार के लिये परमेश्वर की शक्ति है । रोमियों १:१६। उसने वह सत्य दूसरों को बताने का प्रयत्न नहीं किया, जिसका स्वयं उसने अनुभव नहीं किया था (जैसे कुछ लोग करते हैं) ।

१:१२ - ***"मैं धन्यवाद करता हूँ"*** - इफि. ५:२०; १ थिस्स. ५:१८। भजन ७:१७; ५०:१४,१५; ५६:१२; लैव्य. ७:१२,१३।

"सामर्थ दी - कुलु. १:११,२९; फिलि. ४:१३; इफि. ३:१६; ६:१०; २ कुरि. १२:९,१० ।

"विश्वासयोग्य" - इसका अर्थ है कि मसीह ने पहले ही से जान लिया था कि प्रेरित पौलुस नियुक्त किया जाएगा और विश्वसनीय होगा। जो लोग मसीह की सेवा करते हैं, उनके विश्वसनीय होने के बारे में बाइबिल काफी ज़ोर डालती है (मत्ती २४:४५; २५:२१; लूका १६:१०-१२; १ कुरि. ४:२)। प्रत्येक प्रकार की बेईमानी और गद्दारी मसीह के नाम पर कलंक है ।

१:१३ - ***"निन्दा करनेवाला"*** - उसने इस बात से इन्कार किया था कि यीशु उद्धारकर्ता और परमेश्वर के पुत्र थे और यह परमेश्वर की निन्दा थी (मत्ती ९:३ के नोट्स देखें)।

"सतानेवाला" - प्रे. काम ८:१-३; ९-१,२; २२:४,५; २ कुरि. १५:९,१०; गल. १:१३; फिलि. ३:६ ।

"अन्धेर करनेवाला" - यूनानी शब्द एक क्रोधी और उद्दण्डी व्यक्ति की ओर संकेत करता है जो शब्द या कार्य द्वारा या दोनों ही तरह दूसरों को हानि पहुँचाना चाहता है।

"मुझ पर दया हुई" - उसे दया की ही आवश्यकता थी और प्रत्येक व्यक्ति को भी है (लूका १८:१३; रोमियों ३:९,१९; तीतुस ३:३:५) और वह सब कुछ जो वह देने में आनंदित होता है (रोमियों ११:३२; इफि. २:४; मीका ७:८) ।

"अविश्वास की दशा में बिन समझे बूझे" - प्रे. काम २६:९ और २३:१ देखें। वह सोचता था कि मसीहियों को सताने में वह अच्छा कार्य कर रहा था। (यूहन्ना १६:२ से तुलना करें)। वह जानबूझ कर उस ज्ञान का इन्कार नहीं कर रहा था जिसे परमेश्वर ने उसे दिया था। जब लोग जानबूझ कर और जानते बूझते मसीह के शुभसन्देश का तिरस्कार करते हैं, वे अपने आप को दया के दायरे से बाहर जाने के खतरे में डाल देते हैं (मत्ती १२:२२-३४; इब्रा. २:२-३; ६:४-८; १०:२६-३१; १२:२५-२९; नीति.१:२२-३३ से तुलना करें) ।

१:१४ - ***"महान कृपा"*** - यूहन्ना १:१४,१६; रोमियों १:७; २ कुरि.८:९ ।

"बहुतायत से हुआ" - रोमियों ५:२०,२१। विश्वास और प्रेम मसीह में है। उनकी कृपा उन्हें मनुष्यों के पास लाती है ।

जब हम उनसे एक हो जाते हैं, तभी सचमुच में सुसमाचार पर विश्वास करते हैं और उनसे प्रेम करते हैं। यह सभी मसीह द्वारा प्राप्त वरदान हैं (फिलि. १:२९; गल. २:८; गल. ५:२२; रोमियों ५:५)।

१:१५ - *"हर प्रकार से मानने के योग्य"* - ३:१; ४:९; २ तीमुथि. २:११; तीतुस ३:८।

"मसीह यीशु जगत में आए'' - उनका नाश करने नहीं - मत्ती १:१; ९:१३, लूका १९:१०; यूहन्ना ६:५१ ;रोमियों ५:८) । हम सभी पापी हैं (रोमियों ३:९,१९,२३)। यदि मसीह संसार में न आते तो लोगों के लिये मुक्ति कभी भी संभव नहीं थी (प्रेरित ४:१२) ।

१६ के लिए जगत में आए, जिनमें सबसे बड़ा मैं हूँ। **परंतु** मुझ पर इसलिए दया हुई कि मुझ सब से बड़े अपराधी में यीशु मसीह
अपनी पूरी सहनशीलता दिखाए, ताकि जो लोग उन पर अनन्त जीवन के लिए विश्वास करेंगे, उनके लिए मैं एक आदर्श बनूँ ।
१७ **अब** सनातन राजा अर्थात् अविनाशी अनदेखे बुद्धिमान यहोवा का आदर और महिमा युगानुयुग होती रहे। ऐसा ही हो ।
१८ **हे पुत्र,** तीमुथियुस, उन भविष्यद्वाणियों के अनुसार जो पहले तुम्हारे विषय में की गई थीं, मैं यह आज्ञा देता हूं कि तुम उनके
१९ अनुसार अच्छी लड़ाई को लड़ते रहो, **और** विश्वास और उस अच्छे विवेक को थामे रहो, जिसे दूर करने के कारण कितनों
२० का विश्वास रूपी जहाज डूब गया। **उन्हीं** में से हुमिनयुस और सिकन्दर हैं, जिन्हें मैंने शैतान के सुपुर्द दिया, कि उन्हें परमेश्वर
२ की निंदा न करने का पाठ सिखाया जाए ।**अब** मैं सब से पहले यह उपदेश देता हूं कि बिनती, और प्रार्थना, और निवेदन, और
२ धन्यवाद, सब मनुष्यों के लिए किए जाएं। **नेताओं,** अधिकारियों और सब ऊंचे पदवालों के लिए, इसलिए कि हम शान्ति

"सबसे बड़ा मैं हूँ" - इफि. ३:८। पौलुस अपने समय में महान और पवित्र व्यक्ति था । इन पदों में वह अपने बारे में बताता है । पौलुस यह नहीं कह रहा है कि वह अधर्म में लोट रहा है, और दूसरों की तुलना में अधिक बुराई कर रहा है। वह यह बताने का प्रयत्न कर रहा था कि जन्म से ही उसमें बुरा स्वभाव है। (गल. ५:१६,१७; रोमियों ७:१६,१७) उसे मालूम था कि पुराने समय में इस दुष्ट स्वभाव ने उसे क्या क्या करने पर मज़बूर किया था। वह यह भी जानता था कि बहुतायत का अनुग्रह ही उसे मुक्ति दे सकता है, और अन्त तक बचाए रख सकता है। हम अपने विषय में क्या सोचते हैं? इस प्रश्न का उत्तर बहुत आवश्यक है । (लूका १८:९-१४ से तुलना करें) ।

१:१६ - पौलुस जो कि सभी पापियों का मुखिया था, उस पर दया दिखाकर और उसे बचाकर मसीह ने यह दिखा दिया कि वह एक दुष्ट व्यक्ति को भी बचा सकते हैं। किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि बहुत बुरा है और मसीह की दया एवं सामर्थ से परे है ।

"पूरी सहनशीलता" - २ पतरस ३:६,१५। यदि मसीह दुष्ट, निर्बल, मूर्ख लोगों के साथ धीरज नहीं रखते, तो कोई भी बच नहीं सकता था ।

"आदर्श" -परमेश्वर लोगों को कैसे बुलाते हैं इसका पौलुस नमूना था। उद्धार पाने के लिये जैसे पौलुस ने प्रकाश देखा, सभी को देखने की आवश्यकता नहीं। किन्तु हम सभी को वह दया और कृपा प्राप्त करने की आवश्यकता है, जो उसने प्राप्त की ।

"अनंत जीवन" - यूहन्ना ३:१५,१६। मसीह पर विश्वास करने के द्वारा हम इसे प्राप्त कर सकते हैं। यूहन्ना १:१२,१३; ३:३६ ।

१:१७ - *"राजा"* - भजन १०:१६; २४:१०; ४५:१; ४७:२; प्र. वा. १९:१६ ।

"सनातन" - ६:१६; रोमियों १:२३।

"अदृश्य" - यूहन्ना १:१८।

"वही बुद्धिमान हैं" - रोमियों ११:३३; १६:२७; १ कुरि. १:२५; कुलु. २:२,३; यहूदा २५ ।

"महिमा" - लोगों को उनके पापों से बचाने के लिये मात्र एक सच्चे परमेश्वर को आदर प्रशंसा मिलेगी। पौलुस यही चाहता भी था कि केवल परमेश्वर को आदर मिले। इफि. १:६,१२,१४; २:९ से तुलना करें।

१:१८ - *"भविष्यद्वाणियां"* - रोमियों १२:६; १ कुरि. १२:२८; १४:३। यह स्पष्ट है कि परमेश्वर ने जब तीमुथियुस को सेवा के लिये बुलाया, तब परमेश्वर ने पौलुस को यह योग्यता दी कि (या दूसरे भविष्यद्वाणी करनेवाले को) ताकि वह परमेश्वर की बुलाहट को समझे और उसे बताए। प्रे. काम १३:१,२ से तुलना करें ।

"अच्छी लड़ाई लड़ता रहे" - ६:१२; २ तीमुथि. ४:७; इफि. ६:११।

१:१९ - पद ५। यहाँ विवेक और विश्वास का सम्बन्ध देखें। अर्थात् विश्वास एवं पाप से बचाव के बीच। अच्छा विवेक पाने का एक तरीका है, उन बातों को करने से इन्कार करना, जो विवेक मना करता है।

"विश्वास रूपी जहाज डूब गया"- "उनका" विश्वास नहीं, यूनानी में ''उनका'' शब्द नहीं है। विश्वास मसीही सत्य का वह भाग है जिसे परमेश्वर ने प्रगट किया और प्रेरितों ने सिखाया। किसी भी हालत में सच्चे विश्वासियों का विश्वास रूपी जहाज डूबता नहीं है। इब्रा. १०:३९; लूका २२:३१,३२; यूहन्ना १०:२७। परंतु वे लोग जो मसीही होने का दावा करते हैं, वे विश्वास की शिक्षाओं के जहाज को डुबाकर गलत शिक्षा में फँस सकते हैं।

१:२० - पौलुस ने उन लोगों के नाम लेने में हिचकिचाहट नहीं दिखायी, जब उसने जान लिया कि कलीसियाओं को चेतावनी देना आवश्यक है। २ तीमुथि. २:१७; ४:१४,१५ भी देखें।

"मैंने शैतान को सौंप दिया" - १ कुरि. ५:४,५ से तुलना करें। शैतान के विषय में १ इतिहास २१:१०; मत्ती ४:१-१०:; यूहन्ना ८:४४ आदि पर नोट्स देखें। मत्ती भजन १०:१६ में निन्दा पर नोट्स देखें ।

अध्याय २

२:१ - *"बिनती, प्रार्थना और निवेदन"* - इफि. ६:१८; फिलि. ४:६; १ थिस्सल. ५:१७ में प्रार्थना पर और पद देखें ।

"धन्यवाद" - इफि..५:२०;; कुलु. १:१२; २:७; ३:१६; ४:२; १ थिस्सल..५:१८;; लैव्य. ७:१२,१३; भजन.७:१७; ५०:१४,१५; ५६:१२ आदि।

"सब मनुष्यों" - हमारी प्रार्थनाएँ हमारे रिश्तेदारों और मित्रों के छोटे से घेरे तक सीमित नहीं रहनी चाहिए।

२:२ - पौलुस कहता है कि शासकों की आलोचना नहीं, उनके लिये प्रार्थना करो। वह यह संकेत करता है कि मसीही विश्वासियों की प्रार्थनाएं एक देश को प्रभावित कर सकती हैं। यह तब भी सत्य है कि अधिकारी मसीह को मानने वाले नहीं हैं, यहां तक कि विरोधी भी हो

३ पूर्वक और चैन के साथ सारी भक्ति और गम्भीरता से जीवन बिताएं। **यह** हमारे मुक्तिदाता यहोवा को अच्छा लगता, और
४,५ भाता भी है। **वह** यह चाहते हैं कि सब मनुष्यों को मुक्ति मिले, और वे सत्य को भली भांति पहचान लें। **क्योंकि** यहोवा एक
६ ही हैं; और परमेश्वर और मनुष्यों के बीच में भी एक ही बिचौलिया हैं, अर्थात् मसीह यीशु जो मनुष्य हैं, **जिन्होंने** अपने
७ आपको सब के छुटकारे के दाम में दे दिया; ताकि उनकी गवाही सही समय पर दी जाए। **मैं** सच कहता हूं, झूठ नहीं बोलता,
कि मैं इसी उद्देश्य से संदेश देने वाला और प्रेरित और अन्यजातियों के लिए विश्वास और सत्य का उपदेशक ठहराया गया।
८,९ **इसलिए** मैं चाहता हूँ कि हर कहीं मनुष्य बिना क्रोध और विवाद के पवित्र हाथों को उठाकर प्रार्थना किया करे। **वैसे** ही
स्त्रियां भी संकोच और संयम के साथ सुहावने वस्त्रों से अपने आप को संवारे; न कि बाल गूंथने, और सोने, और मोतियों,
१० और बहुमूल्य कपड़ों से, किन्तु भले कामों से अपने आप को सजाएं। **जो** स्त्रियां स्वयं को आत्मिक समझती हैं उनको यही

सकते हैं। (ऐसा पौलुस के दिनों में हुआ करता था)। शायद कुछ देशों में विश्वासियों के शान्ति से न रहने का कारण यह है कि जैसा करना चाहिए, वे अपने अधिकारियों के लिये प्रार्थना नहीं करते।

२:३ - उद्धार पाए हुए और न पाए हुए लोगों के लिये प्रार्थना करने से परमेश्वर प्रसन्न होता है। जिन बातों से परमेश्वर प्रसन्न होते हैं, विश्वासियों को वे ही बातें करनी चाहिए ।

२:४ - संसार में प्रत्येक व्यक्ति के प्रति परमेश्वरीय दृष्टिकोण का यहां एक स्पष्ट कथन है। वह चाहते हैं कि मसीह के बारे में सच्चाई प्रत्येक व्यक्ति जाने और मुक्ति प्राप्त करे। ४:१०;; यूहन्ना १:२९; ३:१६; रोमियों ११:३२; २ कुरि १५:९; २ पतरस ३:९; १ यूहन्ना २:१; यहेजकेल १८:३२ १ यूहन्ना ४:८ मत्ती २३:३७; यूहन्ना ३:१६,२०; ५:४०; २ थिस्स. २:१०-१२ रोमियों ८:२९ के नोट्स देखें।

२:५ - *"परमेश्वर एक ही हैं"* - १:१७; १ कुरि. ८:६; इफि. ४:६; यशा. ४४:६,८; ४५:१२। दूसरे स्थानों पर पौलुस ने सिखाया था कि मसीह त्रिएकत्व के एक व्यक्ति हैं। रोमियों ९:५; फिलि. २:६,११; कुलु. १:१५; २:९; तीतुस २:१३। वह सत्य का खंडन नहीं कर रहा है; किन्तु यहाँ पर मसीह के मनुष्य होने, शरीर में आने की बात कर रहा है। (यूहन्ना १:१४; फिलि. २:७,८; इब्रा. २:१४,१७) ।

"बिचौलिया" - नए नियम में यह पद केवल यहीं और इब्रा. ८:६; ९:१५; १२:२४, में उपयोग किया गया है। यही सत्य सभी स्थानों में अलग शब्दों में है। यूहन्ना १४:६,१३,१४; रोमियों ५:१,२; इफि. २:१८; इब्रा. ४:१४-१६; ७:२५९ १०:१९-२२; १३:१५; १ यूहन्ना २:१। इसलिये कि यीशु परमेश्वर और मनुष्य दोनों ही हैं, वह दोनों ही को समझते हैं और दोनों ही पर अपने हाथ रख सकते हैं, और जिस प्रकार के मध्यस्थ की कामना अय्यूब ने की थी, वह हो सकते हैं। (अय्यूब ९:३२-३५)। कोई भी दूसरा व्यक्ति, संत या ईश्वर, परमेश्वर और मनुष्य के बीच मध्यस्थ नहीं हो सकता । इसलिये कि यीशु सिद्ध बिचवई हैं, किसी दूसरे की आवश्यकता नहीं है। यदि मसीही विश्वासी और सभी मनुष्य इस बात को मान लेते, तो इस पृथ्वी पर एक बड़ा अन्तर होता ।

२:७ - *"छुटकारे का दाम"* - मत्ती २०:२८; रोमियों. ३:२४,२५; गल. १:४।

"सबके" - मसीह सभी लोगों के लिये दाम भर चुके हैं और संपूर्ण संसार के छुटकारे के लिये उन्होंने मूल्य चुकाया है। जब लोग बिना उद्धार के मरते हैं, तब यह उनका दोष है, प्रभु यीशु का नहीं।

"ठीक समयों - गल. ४:४।

"ठहराया गया" - एक बार फिर से पौलुस इस सत्य पर ज़ोर डालता है कि इस कार्य के लिये परमेश्वर ने उसे बुलाया है ताकि वह सत्य सिखाए । गल. १:११,१२।

"गैर यहूदी" - गल. २:७,८;।

२:८ - *"पवित्र हाथों को उठाकर"* - यहूदी और दूसरी जाति के लोगों की हाथों को उठाकर प्रार्थना करने की रीति सामान्य थी। पौलुस यह नहीं कहना चाहता कि किसी विशेष स्थिति में प्रार्थना करने में कोई विशेषता है। मत्ती. १४:१९; २६:३९; लूक १८:१३; यूहन्ना १७:१; प्रेरित १:१४ की तुलना २:१; २०:३६ से करें।

"पवित्र हाथों" - भजन २६:६; यशा. १:१५; याकूब ४:८ से तुलना करें। यदि हम चाहते हैं कि परमेश्वर हमारी प्रार्थना का उत्तर दें, तो निश्चित करें कि हम किसी पाप को तो पकड़े हुए नहीं हैं। परमेश्वर की ओर अशुद्ध हाथों को उठाना उसकी बेइज्ज़ती करना है। दूसरों के प्रति क्रोध हमारी प्रार्थनाओं में रुकावट लाता है। मत्ती ६:१२,१४,१५; इफि. ४:२३,३१,३२; कुलु. ३:१३,१५; याकूब १:६-८ से तुलना करें।

"सन्देह" - यूनानी शब्द 'तर्क करने' या 'हिचकिचाते हुए प्रश्न करने' को दर्शाता है - याकूब १:६-८।

२:९,१० - क्या परमेश्वर को इससे कुछ लेना-देना है कि स्त्रियां कपड़े किस प्रकार पहनती हैं? निश्चित रीति से, इसलिये उसने पौलुस को उभारा कि वह इस प्रकार लिखे। यशा. ३:१६-२३ से तुलना करें। १ पतरस ३:३,४ भी देखें। जो स्त्रियां विश्वासी हैं, उनको ठीक से वस्त्र पहनने चाहिए क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि वे संसारिक स्त्रियों की नकल करें ताकि लोग उन्हें देखें या पुरुष उनकी ओर आकर्षित हों। वे ऐसे संसार में रहती हैं जहाँ निर्धन और मोहताज बिना समुचित भोजन और वस्त्रों के हैं। उनके प्रभु और उद्धारकर्ता ने (मत्ती ९:२०; २ कुरि.८:९) उन्हें ऐसे जीवन के लिये बुलाया है जिसमें स्वयं से इन्कार है, न कि स्वार्थ मत्ती १०:३८; ३९; लूका १४:३३ । निर्धनों को धन देना या वचन की सेवा के लिये धन लगाना अधिक बेहतर है, बजाए सोने के गहने और कीमती वस्त्रों में व्यय करना । परमेश्वर चाहते हैं कि मसीह को मानने वाले पुरुष और स्त्री नम्र, शालीन और सन्तोष रखने वाले हों (६:६-८) और पृथ्वी पर धन इकट्ठा करने के बजाए स्वर्ग में धन रखें (मत्ती ६:१९-२१; मत्ती ६:१९-२१)। सभी विश्वासियों को यह समझना चाहिए कि उन्हें अच्छे कार्यों के गहने और वस्त्र पहनने हैं ।

११,१२ उचित भी है। **स्त्री** को चुपचाप पूरी आधीनता से सीखना चाहिए। **मैं** यह भी कहता हूं कि स्त्री न उपदेश करे, और न पुरुष
१३,१४ पर आज्ञा चलाए, परन्तु चुपचाप रहे। **क्योंकि** आदम पहले, उसके बाद हव्वा बनाई गई। **और** आदम बहकाया न गया, परंतु
१५ स्त्री बहकाने में आकर अपराधिनी हुई। **लेकिन** यदि वे संयम सहित विश्वास, प्रेम, और पवित्रता में स्थिर रहें, तो बच्चों को
३ जन्म देने के समय में सुरक्षा पाएंगी । **यह** बात सत्य है कि जो देखरेख करने वाला बनना चाहता है, वह भले काम की इच्छा
२ करता है। **इसलिए** चाहिए कि देखरेख करने वाला (चरवाह) निर्दोष, और एक ही पत्नी का पति, संयमी, सुशील, सभ्य, सेवा करनेवाला,

---

२:११,१२ *"चुपचाप"* - १ कुरि. १४;३४,३५।

"आधीनता" - १ कुरि. ११:३,७-१०।

"उपदेश करना" - सार्वजनिक शिक्षा में जब पुरुष उपस्थित होते थे। यह स्त्रियों का कार्य नहीं है। किन्तु उन्हें कम उम्र की स्त्रियों को सिखाना चाहिए (तीतुस २:३-५)। नए नियम में हमारे पास एक स्त्री का उदाहरण है जो अकेले में एक पुरुष को वचन सिखाती थी (प्रे. काम. १८:२६), किन्तु प्रेरितों के काम का लेखक उस पर कोई टिप्पणी नहीं करता है।

२:१३,१४ - दो ऐसे कारण हैं जिन्हें पौलुस बतलाता है कि सार्वजनिक रीति से स्त्रियों को क्यों नहीं सिखाना चाहिए, न ही पुरुषों पर अधिकार रखना चाहिए। दोनों ही कारणों का सम्बन्ध उस समय के रीति-रिवाज़ या पुरुष रोमी साम्राज्य में क्या उचित सोचते थे, उससे था । पहला कारण यह है कि परमेश्वर ने पुरुष को पहले बनाया - उत्पत्ति. २:१७;१८,२१,२२। पौलुस कहता है कि परमेश्वर ने इस तरह दिखा दिया, कि स्त्री के ऊपर वह अधिकार रखे, यह परमेश्वर की योजना है । दूसरी बात यह कि स्त्री बहकायी गयी थी, पुरुष नहीं, (उत्पत्ति. ३:१-६)। ऐसा लगता है कि पौलुस यह सलाह दे रहा है कि वचन से सम्बन्धित बातों में पुरुषों से अधिक स्त्रियों के बहकने की संभावना है। यह इस बात को सिद्ध करता है, कि उन्हें यह अनुमति क्यों नहीं मिलनी चाहिए, कि वे पुरुषों पर अधिकार रखें या कलीसिया में शिक्षक का स्थान प्राप्त हो।

"अपराधिनी" -पौलुस यह नहीं कह रहा कि आदम अपराधी नहीं ठहरा (रोमियों ५:१२-१४), किन्तु यह कि हव्वा ने पहले अपराध किया ।

२:१५ - प्रसव की पीड़ा हव्वा के पाप का एक दण्ड है - उत्पत्ति. ३:१६। यहाँ उन स्त्रियों के लिये उत्साहवर्धक शब्द है, जिन्होंने मसीह पर भरोसा किया और अपने जीवन के द्वारा अपने विश्वास का प्रमाण देती हैं।

अध्याय ३

३:१-७ - यूनानी शब्द ''ओवरसियर'' (एपिस्कोपोस, जिसका अनुवाद के. जे. वी. संस्करण में 'बिशप' किया गया है), नये नियम में केवल पांच बार उपयोग किया गया है - प्रेरित २०:२८; फिलि. १:१; १ तीमु. ३:२; तीतुस १:७; १ पतरस २:२५. यह दो यूनानी शब्दों का मिश्रण है जिसका अर्थ है "जो देखभाल करता है"। इस शब्द का उपयोग स्थानीय कलीसिया के अगुवों के लिये किया गया है (प्रेरित २०:१७ की २०:२८; फिलि. १:१ से तुलना करें). देखरेख करने का कार्य, बिशप का कार्य इस पृथ्वी पर सबसे सम्माननीय कार्य है और जो इस प्रकार से करते हैं उनके लिये प्रतिफल है - १ पतरस ४:१-४। इसलिये कि यह पद इतना महत्वपूर्ण है, इसके लिए आवश्यक योग्यताएँ भी ऊँची हैं। यदि कलीसियाएँ इन योग्यताओं को अनदेखा करती हैं और दूसरी योग्यताओं के आधार पर अगुवों का चुनाव करती हैं, वे कलीसियाई जीवन में बड़ी गलती पर हैं और स्वयं को परेशानियों में डाल देंगी।

३:२ - *"निर्दोष"* - जिस व्यक्ति को कलीसिया इस पद के योग्य समझती है, उसे पवित्र ईमानदार और नैतिक जीवन जीना चाहिए कि उसके किसी गलत कार्य के लिए उँगली उठायी न जा सके ।

"एक ही पत्नी का पति" - उन दिनों में एक से अधिक पत्नी रखना आम बात थी। यह संभव था कि ऐसे पुरुष जिनकी एक से अधिक पत्नियाँ थीं, मसीह के शिष्य बन गए थे। ऐसे व्यक्ति को अगुवे का स्थान नहीं मिलना चाहिए। अगुवों को पूरी कलीसिया के लिये ऐसा नमूना होना चाहिए, जिन्हें लोग अपना आदर्श बना सकें (१ पतरस ५:३)। आरंभ से मनुष्य के लिये यह परमेश्वर की योजना थी, कि एक पुरुष की एक ही पत्नी हो - उत्पत्ती ३:२२-२४; मत्ती १९:३-६)। कुछ लोग सोचते हैं कि 'एक ही पत्नी का पति' का अर्थ है कि ऐसा अगुवा जिसका दूसरी बार विवाह न हुआ हो। दूसरे लोग सोचते हैं कि पौलुस यह सिखा रहा था कि अविवाहित पुरुषों को अगुवे (देखरेख करनेवाले) नहीं होना चाहिए, जबकि वह स्वयं अविवाहित था (१ कुरि.१२:२८;२ कुरि. ११:२८)।, फिर भी एक देखरेख करनेवाले से उसका पद ऊँचा था जिसके अंतर्गत वह अनेकों मण्डलियों के ऊपर था। क्या हम इस संभावना के विषय में सोचते हैं कि वह व्यक्ति जिसने १ कुरि. ७:१,८,२६,२७,३२-२४ लिखा, यह सिखा रहा है कि अविवाहित पुरुषों को देखरेख करने वाला नहीं बनना चाहिए? पद ४ पर नोट्स देखें ।

"संयमी" - अपनी इच्छाओं को आधीन करना।

"संगति" - १ कुरिं. ६:१७; २ तीमु. १:७।

"सत्य" - यह पर्याप्त नहीं कि मात्र परमेश्वर के वचन को जाने या सिखाएं, हमें उसके अनुसार करना चाहिये ।

"सेवा करने वाला" - उसे लोगों का अपने घर में स्वागत करना चाहिये और दया दिखानी चाहिये - इब्रा. १३:२। तीतुस में यह और अधिक कठोर शब्दों में है - ***"सेवा के चाहने वाले"*** - जो पहुनाई या सेवा करने में दिलचस्पी लेता है, न कि उसे प्राप्त करने में। स्वार्थवश से अपने आपको दूसरे उन लोगों से बचाना नहीं चाहिये जिन्हें उसकी आवश्यकता है ।

"सिखाने में निपुण" - परमेश्वर का वचन सिखाने के लिए अगुवों को वचन का ज्ञान होना चाहिये - यदि वे स्वयं वचन नहीं जानते तो दूसरों को क्या सिखाएंगे। उनके पास परमेश्वर द्वारा दी गई सिखाने की योग्यता भी होनी चाहिये ।

३ और सिखाने में निपुण हो । **शराबी** या मारपीट करनेवाला न हो; बल्कि कोमल स्वभाव का हो। वह झगड़ालू और लोभी न हो।
४,५ **अपने** घर का अच्छा प्रबन्ध करता हो, और अपने बच्चों का उचित अनुशासन करता हो। (**जब** कोई अपने ही घर का
६ प्रबन्ध करना न जानता हो, तो परमेश्वर की कलीसिया की देखभाल कैसे करेगा?) **दूसरी** बात यह, कि देखरेख करने वाला
७ नया शिष्य न हो, ऐसा न हो, कि घमण्ड से भरकर शैतान के समान दण्ड पाए। **बाहरवालों** के बीच उसकी गवाही अच्छी
८ हो, ऐसा न हो कि निन्दित होकर शैतान के फंदे में फंस जाए। **वैसे** ही सेवक को भी सम्मानीय होना चाहिए, दोरंगी, शराबी
९,१० और नीच कमाई के लोभी न हों। **परंतु** विश्वास के भेद को शुद्ध विवेक से संभालें। **इन्हें** भी पहले परखा जाए, उसके बाद

३:३ - ***"शराबी"*** - पियक्कड़ न हो, शराब का आदी न हो। रोमि. १४:२१ और इफि. ५:१२ हमें सर्वोत्तम सिद्धांत देते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं को परमेश्वर के प्रति समर्पित करना चाहिये, न कि दास के ।

"झगड़ालू" - किसी भी प्रकार से परमेश्वर के सेवकों को गाली नहीं देनी चाहिये। न ही दूसरों को पैसा देकर ऐसा करना चाहिये । जो ऐसा करता है, उसे मसीही नहीं कहलाना चाहिये, न ही उसे मण्डली में अगुवाई करने का स्थान दिया जाए ।

"और न लोभी हो" - जो व्यक्ति धन या सम्पत्ति बेईमानी या गलत तरीके से लेता है, उसे नेतृत्व का कार्य नहीं दिया जाना चाहिये। इतना ही नहीं, ऐसी कोई भी इच्छा उसे सदा के लिये नाश कर सकती है - ६:५; यूह. १२:६। काश ! प्रत्येक मसीही ऐसे लालच से जो विष समान है, किनारा करें।

"कोमल हो, झगड़ालू नहीं" - २ तीमु. २:२४,२५; मत्ती ११:२६।

"न लोभी हो" - ६:६-१०; मत्ती ६:२४; लूका १६:१३,१४। यदि इन सभी सिद्धांतों को लागू किया जाए, तो आज कलीसिया से कितने अगुवे निकाल दिये जाएंगे ?

३:४ - अपने घर का अच्छा प्रबंध करता हो, और बच्चों को सारी गंभीरता से आधीन रखता हो - तीतुस १:६ देखें। यदि कोई व्यक्ति अपने घर में सही स्थान नहीं ग्रहण करता है, तो वह कलीसिया की सही रीति से अगुवाई करने के लायक भी नहीं है। यह इस बात को निर्धारित करने के लिये अच्छा पैमाना है, कि कोई व्यक्ति देखरेख करने के योग्य है या नहीं। क्या इसका अर्थ यह है, कि विवाहित होने के बाद यदि उसकी संतान नहीं है, तो वह देखरेख करने वाला नहीं बन सकता? नहीं ऐसा नहीं है। पौलुस का अर्थ यह है, कि उसे अपने बच्चों को वश में करना चाहिये। पद २ से तुलना करें ।

"एक ही पत्नी का पति" यदि पौलुस यह नहीं कह रहा है कि देखरेख करने वाले के पास बच्चे होने ही चाहिये, तो वह यह भी नहीं कह रहा है, कि उसे विवाहित होना ही चाहिये। दोनों बातें एक ही दायरे की हैं ।

३:६ - ***"नया शिष्य न हो"*** पौलुस तुरंत कहता है .... क्यों? यह बेहतर है कि देखरेख करने वाला न हो, बजाए इसके कि ऐसे लोगों को नियुक्त किया जाए, जिन्हें अनुभव न हो । इसके पहले कि विश्वासियों को नेतृत्व का कार्य सौंपा जाए, उन्हें आत्मिक रूप से उन्नति करना, परमेश्वर के सत्य में मजबूत हो जाना चाहिये। नहीं तो वे दूसरों को सिखा नहीं पाएंगे, न ही अगुवाई कर पाएंगे । यह भी कि आत्मिक शिशु, जिन्हें नेतृत्व की जिम्मेदारी दी जाती है, घमण्ड से फूल न जाएं ।

"शैतान के समान दण्ड" - अर्थ यह हो सकता है, शैतान निरंतर विश्वासियों पर दोष लगाता है (प्रकाशित. १२:१०)। यदि वह कलीसिया के अगुवे में घमण्ड और कपट देखता है, तो उसे परमेश्वर के साम्हने दोष लगाने का अवसर मिलता है। मत्ती ४:१ में शैतान पर नोट्स देखें ।

३:७ - ***"बाहर वालों में उसकी अच्छी गवाही हो"*** - कुलु. ४:५; १ थिस्सल. ४:१२; १ कुरि. १०:३२; १ पतरस २:१२; मत्ती ५:१६। सच पूछें तो यह बहुत आवश्यक है। इसका अर्थ है कि उसका जीवन, मात्र शब्द नहीं, उन लोगों के लिए गवाही होना चाहिए। यदि एक मण्डली ऐसे व्यक्ति को अगुवा नियुक्त करती है, जो समाज में दुष्टता और अनैतिकता का जीवन जीता है, तो वे उस पर दोष लगाकर पूरी कलीसिया के लिए शर्म का कारण बन सकते हैं। यह उनके लिए एक ठोकर का कारण होगा, जो लोग मसीह पर विश्वास करना और कलीसिया का अंग बनना चाहेंगे ।

"शैतान का फंदा" - तुलना करें लूका २२:३१,३३; भजन ९१:३; १२४:७; २ तीमु. २:२६।

तीतुस ६:१-९ में एक बार फिर पौलुस अगुवे में आवश्यक गुणों की सूची देता है। जो तीमुथियुस के १ ले पत्र के १ ले अध्याय में दिखाई देती है। यह भी कि अगुवों के बच्चों को विश्वासयोग्य होना चाहिए, न कि अनाज्ञाकारी। उसे बहुत जल्द क्रोध नहीं आना चाहिए, नीच कमाई का प्रेमी नहीं होना चाहिए। वह पवित्र और सच्चा हो और विश्वसनीय वचन को पकड़ कर रखता हो।

३:८ - ***"सेवक"*** - डीकन्स - यह यूनानी शब्द से निकला है जिसका अर्थ है 'सेवा करना।' आरंभिक कलीसिया में अगुवे देखरेख करने वाले या बिशप और सेवक हुआ करते थे। फिलि. १:१। अगुवों का कार्य था कलीसिया के आत्मिक जीवन को देखना और वचन की शिक्षा देना (पद२)। सेवक दूसरे कार्य भी करते थे। प्रे. काम.६:१-६ से तुलना करें।

''सम्मानीय'' - यदि लोग आदर के योग्य नहीं हैं, तो कलीसिया में आदर पाने के भी योग्य नहीं हैं।

''नीच कमाई के लोभी नहीं'' - इस सम्बन्ध में कलीसिया में छोटे से छोटे सेवक को भी उतना ही ईमानदार होना चाहिए जितना कि प्रधान रखवाले को - पद ३। कलीसिया में या किसी भी संस्था में, दुष्ट लोग एक समस्या उत्पन्न कर सकते हैं और सदस्यों का आत्मिक और भौतिक नुकसान कर सकते हैं। दुख की बात यह है कि अगुवेपन की इन योग्यताओं के बारे में सतर्कता नहीं बरती जाती है।

३:९ - ***"विश्वास के भेद को शुद्ध विवेक से संभालें"*** - १:५,१९। विश्वास के रहस्य का अर्थ है परमेश्वर का यह प्रकाशन कि क्या विश्वास करना चाहिए। सेवक एवं अन्य कलीसिया के अगुवे (और प्रत्येक सदस्य) को ईमानदारी से इस सत्य पर भरोसा करना चाहिए और

११ यदि निर्दोष निकलें, तो सेवक का काम करें। **इसी** प्रकार से स्त्रियों को भी गम्भीर होना चाहिए। वे दूसरों पर दोष लगानेवाली
१२ न हों, पर सचेत और सब बातों में विश्वासयोग्य हों। **सेवक** एक ही पत्नी के पति हों और अपने बच्चों पर उचित निगरानी
१३ रखते हों और अपने घरों का अच्छा प्रबन्ध करना जानते हों। **क्योंकि** जो सेवक का काम अच्छी तरह से कर सकते हैं, वे
१४ अपने लिए अच्छा पद और उस विश्वास में, जो मसीह यीशु पर है, बड़ा साहस प्राप्त करते हैं। **मैं** तुम्हारे पास जल्दी आने
१५ की आशा रखने पर भी ये बातें तुम्हें इसलिए लिखता हूं, **कि** यदि मेरे आने में देर हो, तो तुम जान लो कि परमेश्वर का
१६ घर, जो जीवित परमेश्वर की कलीसिया, सत्य का खंभा और नींव है; उसमें कैसा व्यवहार करना चाहिए। **इसमें** कोई सन्देह
नहीं कि खरे जीवन का भेद गम्भीर है अर्थात् वह जो शरीर में प्रगट हुए, आत्मा में धर्मी ठहरे, स्वर्गदूतों को दिखाई दिए,
४ गैर-यहूदियों में उनका सन्देश सुनाया गया, जगत में उन पर विश्वास किया गया, और महिमा में ऊपर उठाए गए । **परन्तु**
आत्मा स्पष्टता से कहता है, कि आनेवाले समयों में कई लोग भरमानेवाली आत्माओं, और दुष्टात्माओं की शिक्षाओं पर मन
२ लगाकर विश्वास से बहक जाएंगे। **यह** उन झूठे मनुष्यों के कपट के कारण होगा, जिनका विवेक मानो जलते हुए लोहे से दागा

मात्र शब्दों तक सीमित न रहें ।

३:१० - *"इन्हें भी पहले परखा जाए"* - इससे पहले कि किसी व्यक्ति को मण्डली में जिम्मेदारी दी जाए, नियुक्त करने वालों को यह आश्वासन होना चाहिए कि वह इस पद के योग्य है। यदि वह अयोग्य व्यक्ति को पद दे या इस आशा से दिए गए उद्देश्य के अलावा किसी और उद्देश्य से पद दे, तो मण्डली में समस्या होगी।

३:११ - सेवकों की पत्नी या ऐसी स्त्री जिसके पास कलीसिया में ज़िम्मेदारी है, एक अच्छी गवाही होनी चाहिए ।(रोमियों १६)।

३:१२ - २:४।

३:१३ - मज़बूत और निश्चित विश्वास उनको मिलेगा जो मसीह की सेवा ईमानदारी से करते हैं और अपने कार्य के प्रति समर्पित हैं । इब्रा.. ६:१०,११ से तुलना करें।

३:१४,१५ - *"परमेश्वर का घर"* - का अर्थ शायद मण्डली है - इफि. २:१९; इब्रा. ३:६ जिस मण्डली की स्थापना परमेश्वर ने की है और वह उसका पोषण करते हैं इफि. ३:१४,१५; ५:३२; मत्ती १२:४६-५०; इब्रा. २:११। जैसा कि प्रत्येक परिवार में होता है, परमेश्वर के परिवार में भी होता है, व्यक्ति को व्यवहार करना जानना चाहिए।

"सत्य का खम्भा और नींव"- यहां पौलुस किसी स्थानीय कलीसिया या किसी और के बारे में नहीं कह रहा है। मसीह इस मण्डली के सिर और नींव हैं (इफि. १:२२,२३; २:२०,२२; १ कुरि. ३:११; कुलु. १:१८)। इसे मसीह अपने लिए बना रहे हैं (मत्ती १६:१८), जो लोग आत्मिक जन्म का अनुभव प्राप्त करते है, वे इस मण्डली के अंग हैं (यूहन्ना १:१२,१३; ३:३-८; १ कुरि. १२:१२,१३)। यही मात्र एक कलीसिया है, जो परमेश्वर के सत्य की ठोस नींव पर बनी है। परमेश्वर के हाथों में यह मण्डली 'खम्भा और नींव' बनती है, जो संसार के सामने परमेश्वर के वचन (सत्य) को रखती है। यह सत्य की नींव बनती है, क्योंकि मसीह इसका सिर हैं और इसकी नींव भी ।

३:१६ - *"खरे जीवन का भेद"* - पौलुस उन लोगों के व्यवहार के बारे में बात कर रहा है जो परमेश्वर और उसकी कलीसिया के हैं। जैसे परमेश्वर ने दूसरे सत्य को प्रगट किया है, यह एक रहस्य है (रोमियों १६:२५,२६; इफि. ३:२-६; ५:३२; कुलु. १:२६,२७)। बाइबिल रहस्य एक ऐसा सत्य है, जिसे मनुष्य तब तक नहीं जान सकता जब तक कि परमेश्वर उसे प्रगट न करे। यूनानी शब्द भक्ति का अर्थ है सादगी, श्रद्धा। इसका अर्थ है परमेश्वर द्वारा दी गई शिक्षा के अनुसार, परमेश्वर के प्रति आदरभाव के साथ जीना - तुलना करें २:२; ४:७,८; ६:३,५,६,११; २ तीमु. ३:५; तीतुस. १:१ ।

"वह जो शरीर में प्रगट हुए" - परमेश्वर मसीह में शरीर में होकर आए - यूहन्ना १:१४। फिलि. २:६; लूका २:११ की टिप्पणी देखें।

"शरीर में" - यूहन्ना १:१४; रोमियों ८:३; इब्रा. २:१४; १०:५।

"आत्मा" - मत्ती ३:१६;१२:२८; यूहन्ना १:३२-३४; रोमियों १:४। मसीह के जीवन में और उनके मरे हुओं से जी उठने में, परमेश्वर के आत्मा ने यह प्रगट किया, कि मसीह पवित्र निष्कलंक और परमेश्वर के पवित्र पुत्र हैं।

"स्वर्गदूत" - उत्पत्ति. १६:७। मसीह के जन्म के समय में स्वर्गदूत उपस्थित थे, जंगल में उनकी परीक्षा के समय और उनके जी उठने एवं स्वर्ग पर उठाए जाने के समय भी (लूक २:६-१५; मरकुस १:१३; मत्ती २८:५; प्रे.काम. १:१०,११ इब्रा. १:६)।

"गैर-यहूदियों में" - मत्ती २८:१८, १९; इफि. ३:८,९; कुलु. १:२३।

"विश्वास किया गया" -प्रे. काम. ४:४; ५:१४; ६:४२; ११:२१; १४:१; १७:१२; १८:८; १९:१८; २१:२०।

"महिमा" - लूक २४:५१; प्रे. काम. १:९; इफि. १:२०,२१।

अध्याय ४

४:१ - *"आत्मा"* - परमेश्वर के आत्मा ने भविष्य को प्रगट किया। यशायाह ४६:१०। परमेश्वर जानते थे कि झूठे उपदेशक और शिक्षक उठ खड़े होंगे, इसलिए बाइबिल में बहुत स्थान पर उन्होंने चितौनी दी थी। मत्ती ७:१५; २४:४,५,२४; प्रे. काम २०:२९,३०; रोमि. १६:१६,१७; २ कुरि. ११:१३-१५; २ तीमु. ३:१;४:३; २ पतरस २:१ आदि।

"विश्वास" - यह अर्थ उस सच्चाई से है, जिसे परमेश्वर ने प्रगट किया, वह सत्य जिसे सच्चे विश्वासियों ने ग्रहण किया ।

"भरमाने वाली आत्माएं" - मत्ती ४:२४। हमें यह समझना है कि आत्माओं के अदृश्य संसार में कुछ आत्माएं मसीहियों को झूठे सिद्धान्त सिखाकर परमेश्वर के सत्य से गुमराह करती हैं। इफिसियों ६:११,१२ से तुलना करें।

४:२ - पौलुस उन लोगों से परिचय कराता है, जिन्हें कलीसिया में झूठी शिक्षा फैलाने के लिए दुष्टात्माएं उपयोग करती हैं ।

३ गया है। **वे** विवाह करने से रोकेंगे और भोजन की कुछ वस्तुओं से परहेज़ करने की आज्ञा देंगे, जिन्हें परमेश्वर ने इसलिए
४ बनाया कि विश्वासी, और सत्य के पहचानने वाले, धन्यवाद के साथ खाएं । **इसका** कारण यह है कि परमेश्वर द्वारा बनाई
५ हुई हर एक वस्तु अच्छी है; और कोई भी वस्तु अस्वीकार करने के योग्य नहीं,परंतु उसे धन्यवाद के साथ खाया जाए, **क्योंकि**
६ वह परमेश्वर के वचन और प्रार्थना के द्वारा शुद्ध हो जाती है। **यदि** तुम भाइयों को इस विषय में समझाते रहोगे, तो मसीह
यीशु के अच्छे सेवक ठहरोगे; और विश्वास और उस अच्छे उपदेश की बातों से, जो तुम मानते आए हो, तुम्हारा पालन-पोषण
७ और विकास होता रहेगा । **लेकिन** ईश्वररहित और बुढ़ियों की सी कहानियों से अलग रहो; और पवित्र जीवन के लिए
८ अनुशासन करो। **क्योंकि** शारीरिक व्यायाम का लाभ सीमित है, पर पवित्र जीवन सब बातों के लिए लाभदायक है, क्योंकि इस
९ समय के और आनेवाले जीवन की भी प्रतिज्ञा इसी के लिए है। **और** यह बात सच और हर प्रकार से मानने के योग्य है।
१० **क्योंकि** हम परिश्रम और कोशिश इसीलिए करते हैं ताकि हमारी आशा जीवित परमेश्वर पर हो, जो सब मनुष्यों, विशेष करके

झूठ है *"झूठे मनुष्यों के कपट के कारण"* - यह आवश्यक नहीं कि जिन बातों को वे सिखाते हैं, उन पर स्वयं भरोसा करते हों ।उन्हें बोलने में कोई कठिनाई नहीं होती है। इस तरह वे दिखा देते हैं कि किसकी संतान हैं - यूहन्ना ८:४४। 'दागा हुआ विवेक' ऐसा जो मरा हुआ है, शान्त है। इफि. ४:१९ से तुलना करें ।

४:३ - ये हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि ये दो बातें हैं जो झूठे शिक्षक करने के लिए मना करते हैं। इसके अलावा और भी हैं। किन्तु दो, यह सिखाने के लिए काफी हैं कि उनकी शिक्षा परमेश्वर के वचन पर नहीं है। सच पूछें तो वे अपनी शिक्षाओं को बाईबिल से ऊंची दिखाते हैं। सभी गलत शिक्षाओं के बारे में यह सबसे खतरनाक शिक्षा है।

"विवाह करने से रोकेंगे" - देखें उत्पत्ति १:२७,२८; २:२२-२४; मत्ती १९:४-६; इब्रा. १३:४। रोकना एक कठोर शब्द है। १ कुरि. अध्याय ७ में (७:२,२५,२६ आदि) जो भाषा उसने इस्तेमाल की है, उससे तुलना करें। कलीसिया में समस्या के बावजूद पौलुस ने विवाह करने से मना नहीं किया, किन्तु सलाह दी। इब्रानियों १३:४ भी देखें। इस पृथ्वी पर किसी को ईश्वरीय अधिकार नहीं है, कि किसी को विवाह करने से रोके। बाईबिल में कहीं ऐसी सलाह नहीं है। यहां पौलुस कहता है कि यह शिक्षा परमेश्वर से नहीं, किन्तु दुष्टात्माओं और झूठे भविष्द्वक्ताओं की ओर से आती है।

"भोजन" - उत्पत्ति १:२९; ९:३; मरकुस ७:१९; प्रे. काम १०:९,१६; रोमि. १४:१४,२०। 'आज्ञा दे' शब्द पर ध्यान दें। भोजन के सम्बन्ध में लोगों को आज्ञा देना कि वे क्या खाएं या क्या न खाएं, बाईबिल की शिक्षा के अनुसार नहीं है। रोमि. १४ में पौलुस ने जो सिखाया उससे तुलना करें। बाईबिल में न्यू टेस्टामेन्ट के आधार पर कोई ऐसा भोजन नहीं जिसे खाना मना किया गया है। इस पृथ्वी के सभी भागों में कुछ लोग कुछ प्रकार के भोजन को न खाने, विवाह आदि को न करने को आत्मिकता और पवित्रता का प्रतीक समझते हैं। शायद यही कारण है कि दुष्टात्माएं सोचती हैं कि ऐसी शिक्षाएं दी जाएं। वे सदा पवित्रता और धार्मिकता के सम्बन्ध में झूठी और नाश करने वाली शिक्षा को फैलाना चाहती हैं। साथ ही वे यह चाहती हैं कि लोग परमेश्वर के जीवित वचन पर से ध्यान हटाकर भोजन और सन्यासवाद, शरीर को पीड़ा देने वाली और अपने आप को इन्कार करनेवाली बातों को प्रोत्साहन दें। कुलु. २:२०,२३ से तुलना करें। यह शिक्षा कि वस्तुएं हमें परमेश्वर के सामने ग्रहणयोग्य बनाती हैं, दुष्ट आत्मा की ओर से हैं। हमारा ग्रहण किया जाना, यीशु पर विश्वास करने के द्वारा और हमारे जीवन का उसमें होने के द्वारा है। इसके अलावा और कोई आज्ञा नहीं है। इसे छोड़ और कोई धार्मिकता की आवश्यकता नहीं है ।

"धन्यवाद" - मत्ती १४:१९; २६:२६; रोमि. १४:६; कुलु. २:६,७; १ थिस्सल. ५:१८।

४:४ - उत्पत्ति १:१,३१। पौलुस रोमियों को याद दिला रहा है कि सभी वस्तुओं को रचनेवाले परमेश्वर हैं। बनाई हुई वस्तुओं में कुछ भी बुरा नहीं है । विवाह आदि जो परमेश्वर ने नियुक्त किया है, उसे न करना पवित्रता और आत्मिकता नहीं है।

४:५ - परमेश्वर के वचन में मनुष्य के उपयोग के लिए हर प्रकार के भोजन को ठहराया है। धन्यवाद की प्रार्थना उस व्यक्ति के लिए भोजन को शुद्ध और पवित्र करती है, जो यह प्रार्थना करता है ।

४:६ - *"यीशु का अच्छा सेवक"* - अपने मन, हृदय और आत्मा से इस प्रकार का बनने के लिए कलीसिया में प्रत्येक प्रकार के शिक्षक, प्रचारक, अगुवे को प्रयास करना चाहिए। । यदि वे ऐसा चाहते हैं तो इस सत्य को उन्हें पकड़े रहना है और विश्वास एवं साहस के साथ दूसरों को बताना है ।

४:७ - *"ईश्वररहित कहानियां"* - १:४।

"बूढ़ियों की सी कहानियों" - पौलुस का अर्थ उन कहानियों से था जो सत्य नहीं थीं। जिनका कोई इतिहास नहीं था, और न ही वास्तविकता।

"खरा जीवन" - पौलुस एक ऐसे यूनानी शब्द का उपयोग करता है जो मसीही विश्वास को व्यवहारिक जीवन में प्रगट करने को दिखाता है, यह विश्वास का जीवन है जिसे प्रत्येक मसीही विश्वासी को जीना चाहिए। इसका अर्थ हुआ कि उन्हें ऐसा करने के लिए स्वयं को सिखाना है, अनुशासित करना है। इब्रा. ५:१४; १ कुरि. ९:२४-२७ से तुलना करें। मसीह के सेवक को चाहिए कि मानसिक एवं शारीरिक रीति से उसी प्रकार प्रशिक्षित करे, जैसे एक पहलवान शारीरिक बातों में अपने आप को करता है ।

४:८ - *"इस समय के और आनेवाले जीवन की भी प्रतिज्ञा इसीलिए है"* - भक्ति इस वर्तमान और भविष्य में आशीष लाती है । अधर्मी व्यक्ति को अधिकार नहीं कि वह इस संसार में और आने वाले संसार में परमेश्वर से कुछ आशा रखे।

४:१० - *"परिश्रम"* - १ कुरि. ५:१०; कुलु १:२९।

११,१२ विश्वासियों के उद्धारकर्ता हैं। **इन** बातों की आज्ञा दो और उन्हें सिखाते रहो। **कोई** तुम्हारी जवानी को तुच्छ न समझने पाए; लेकिन बातचीत,
१३ चाल-चलन, प्रेम, विश्वास और पवित्रता में विश्वासियों के लिए आदर्श बन जाओ। **जब** तक मैं न आऊं, तब तक पढ़ने,
१४ और उपदेश और सिखाने में लगे रहो। **उस** वरदान से जो तुम में है, और भविष्यद्वाणी के द्वारा अगुवों के हाथ रखते समय
१५ तुम ने पाया था, लापरवाह मत रहो। **उन** बातों को सोचते रहो और उन्हीं में अपना ध्यान लगाए रहो, ताकि तुम्हारी तरक्की
१६ सब पर प्रगट हो। अपने और अपने उपदेश के विषय में सावधान रहो। **इन** बातों में स्थिर बने रहो, क्योंकि यदि ऐसा

"जीवित परमेश्वरं" - ३:१५। मसीह में विश्वासी के पास 'जीवित परमेश्वर' एक 'जीवित आशा' है (१ पतरस १:३)।

"उद्धारकर्ता" - पौलुस यह नहीं कह रहा है कि सभी लोग उद्धार पाएंगे। वह यह कह रहा है कि वही हैं जो दूसरों की तब तक रक्षा करते हैं, प्रबंध करते हैं, जब तक वे इस पृथ्वी पर हैं (प्रे. काम १४:१७; १७:२५-२७)। इतना ही नहीं, वह सभी को अनंत उद्धार देते हैं और क्षमा करने के लिए तैयार हैं, इसीलिए हर प्रकार से उद्धारकर्ता हैं (१:१)।

४:११ - ***"आज्ञा कर सिखाता रहें"*** - मसीह के सच्चे सेवक अधिकार के साथ बोल सकते हैं। उन्हें ऐसा करना भी चाहिये। वे पृथ्वी पर मसीह के समान हैं। आत्मिक बातों में सत्य के सम्बन्ध में उनके पास परमेश्वर का प्रकाशन है। वे बूढ़ी स्त्रियों की कहानियां और सन्देहस्पद शिक्षाएं नहीं देते हैं। उन्हें यह नहीं दिखाना चाहिये कि वे संदेह वाली बातें सिखा रहे हैं। देखें १ पतरस १:१।

"इन बातों" - ४:३ जैसी बातें नहीं, लेकिन ऐसी जिन्हें परमेश्वर ने प्रगट किया। किसी भी कलीसियाई अगुवे का यह अधिकार नहीं कि वह ऐसा कुछ सिखाए, जो वचन में नहीं है।

४:१२ - ***"जवानी"*** - इफिसुस की मण्डली में दूसरे लोगों की तुलना में तिमोथी कम उम्र का रहा होगा। किंतु परमेश्वर ने उसे उस पद पर रखा ताकि अधिकार के साथ वे सच वचन दे और किसी को भी अवसर न दे कि कम उम्र का होने के कारण तुच्छ ठहराया जाए।

"आदर्श बनना" - प्रत्येक मसीही अगुवे को आदर्श होना चाहिये (१ पतरस ५:३; १ कुरिं. ११:१; फिलि. ३:१७; १ थिस्स. ३:७)। यदि वह एक अच्छा नमूना नहीं है, तो उसे अगुवा नहीं बनना चाहिये।

"प्रेम" - पवित्रता, पौलुस मसीही जीवन के लिये आवश्यक बातों की सूची देता है। यह संभव नहीं कि इनमें से किसी एक को निकाल दिया जाए और फिर भी उस प्रकार का जीवन रहे। दुख की बात यह है कि कुछ प्रचारक एक या दो में रुचि दिखाते हैं, किंतु दूसरों की अनदेखी करते हैं।

४:१३ - ***"पढ़ने"*** - यहां इस शब्द का अर्थ है वचन का कलीसिया या आराधनालय में पढ़ा जाना। जब यहूदी सामूहिक आराधना के लिये आया करते थे, तब ऐसा वे किया करते थे। लूका ४:१६,१७; एज्रा ८:१-३; प्रेरित. १३:१५ देखें। मण्डली बनने के बाद यह अभ्यास उन्होंने जारी रखा (कुलु. ४:१६,१७; १ थिस्स. ५:२७)। यह अभ्यास उन दिनों इसलिये अच्छा था, क्योंकि हर एक मसीही के पास बाइबिल नहीं थी। यदि होती भी, तौभी प्रत्येक पढ़ नहीं सकता था। आज भी संसार के अनेक स्थानों में बाइबिल का सार्वजनिक रूप से पढ़ा जाना लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

"सिखाने" - एक पास्टर का काम सन्देश देना एवं सिखाना है। सन्देश देने का उद्देश्य है इच्छा और विवेक तक पहुंचने के साथ ही सुनने वाले के मन तक पहुंचना। मसीही विश्वास की सच्चाईयों को सिखाना शिक्षा है। प्रायः विश्वासियों के मन (दिमाग) इसका लक्ष्य होता है (हालांकि इच्छा को अनदेखा नहीं किया जा सकता)। मसीही पास्टर के जीवन में इन दोनों का महत्व है।

४:१४ - ***"निश्चिंत"*** - परमेश्वर द्वारा दिए गए किसी वरदान को हल्की-फुल्की बात समझना सम्भव है। तुलना करें मत्ती २५:२४-२७।

"वरदान" - २ तीमु. १:६। पौलुस आत्मिक योग्यता की बात करता है। देखें रोमि. १२:६-८; २ कुरिं. १:७; १२:४-११,२८;१४:१।

"भविष्यद्वाणी द्वारा" - १:१८। पवित्र आत्मा की प्रेरणा से भविष्यद्वाणी का किया जाना पवित्र आत्मा द्वारा दिया गया वरदान है (१ कुरिं. १४:२९-३१)।

"अगुवों के हाथ रखते समय" - यह उस समय हुआ जब इफिसुस में अगुवे एकत्र हुए और सेवकाई के लिये उसे अलग किया (प्रेरित. १३:३ से तुलना करें)। बिना हाथ रखे परमेश्वर लोगों को वरदान और योग्यताएं दे सकते हैं और देते हैं। किंतु कलीसिया में हाथ रखने की विधि लोगों की विशेष सेवा की निपुणता के लिये परमेश्वर और विश्वासियों के बीच एकता और शांति को दिखाती है।

४:१५ - ***"पूरा"*** - जो सेवा पूरे मन से नहीं की जाती, परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकती। मसीह के प्रत्येक सेवक के पास वही तेज इच्छा होनी चाहिये, जो पौलुस के पास थी। प्रेरित. २०:२४; कुलु. १:२९।

४:१६ -मसीह के प्रत्येक सेवक को ध्यान रखना चाहिये कि वह कैसा जीवन जीता है, क्या सिखाता है। यदि हमारी शिक्षा ठीक नहीं है तो पवित्र जीवन जीने का कोई अर्थ नहीं है। यदि हमारा जीवन पवित्र नहीं है तो सही सिद्धांत सिखाने का कोई अर्थ नहीं।

"अपने सुननेवालों के लिये मुक्ति का कारण" - यहेज. ३३:६,९। केवल परमेश्वर उद्धारकर्ता हैं (१:१)। पौलुस मानता था कि तिमोथी उद्धार पा चुका है, नया जन्म पा चुका है, उसने अनंत जीवन ग्रहण किया है (१:२)। शुभ संदेश देने और जीवित रहने के तरीके के द्वारा परमेश्वर के सेवक, उद्धार नहीं प्राप्त कर सकते (इफि. २:८,९)। किंतु परमेश्वर की सहायता से वे डरते और कांपते हुए अपने उद्धार का कार्य कर सकते हैं (फिलि. २:१२)। यह बहुत आवश्यक है (कुलु. १:२३; इब्रा. ३:६,१४; ६:१२)। अपनी और अपनी शिक्षा की चौकसी करके वे अपने आपको गंभीर ताड़ना से बचा सकते हैं। यूनानी शब्द, जिसका अनुवाद 'मुक्ति' किया गया है इसका अर्थ पाप से मुक्ति के साथ साथ अनेक और बीमारियों से बचना है।

इसका अर्थ है कि परमेश्वर के हाथों में विश्वासयोग्य सेवक एक हथियार है। परमेश्वर उसे दूसरों के उद्धार के अनुभव में लाने के लिये उपयोग करता या उनके विश्वास में आगे बढ़ने में सहायक होगा। क्या मनुष्य के लिये इस से बढ़कर कोई कार्य है ?

५ करते रहोगे तो तुम अपने और अपने सुननेवालों के लिए भी मुक्ति का कारण बनोगे ।**किसी** बूढ़े को न डांटो; परंतु उन्हें
२ पिता जानकर जवानों को भाई जानकर और बूढ़ी स्त्रियों को माता जानकर समझा दो । **जवान** स्त्रियों को पूरी पवित्रता से
३,४ बहन जानकर, समझा दो। **उन** विधवाओं का आदर करो जो सचमुच में विधवा है। **यदि** किसी विधवा के बच्चे या नातीपोते
हों, तो वे पहले अपने ही घराने के साथ योग्य बर्ताव करना, **और** अपने माता-पिता आदि को उचित आदर देना सीखें, क्योंकि
५ यह परमेश्वर को प्रसन्न करता है। **जो** सचमुच में विधवा है, और उसका कोई नहीं, वह परमेश्वर पर आशा रखती है, वह
६,७ रात-दिन प्रार्थना में लगी रहती है **परन्तु** जो भोगविलास में पड़ गई, वह जीते जी मर गई है। **इन** बातों की भी आज्ञा दिया
८ करो, ताकि वे निर्दोष रहें। **यदि** कोई अपनों की और विशेष करके अपने घराने की चिन्ता न करे, तो वह विश्वास से हट
९ गया है, और अविश्वासी से भी अधिक बुरा बन गया है। **उसी** विधवा का नाम लिखा जाए, जो साठ वर्ष से कम न हो,
१० और एक ही पति की पत्नी रही हो, **और** भले काम में उसका अच्छा नाम रहा हो, जिसने बच्चों का पालन-पोषण किया हो;
मेहमानों की सेवा की हो, पवित्र लोगों के पांव धोए हों, दुखियों की सहायता की हो, और हर एक भले काम में मन लगाया
११ हो। **परंतु** जवान विधवाओं के नाम न लिखना, क्योंकि जब वे मसीह का विरोध करके सुख-विलास में पड़ जाती हैं, तो विवाह
१२,१३ करना चाहती हैं, **और** दोषी ठहरती हैं, क्योकि उन्होंने अपने पहले विश्वास को छोड़ दिया है। **इसके** साथ ही साथ वे घर
घर फिरकर आलसी होना सीखती हैं, और केवल आलसी ही नहीं, किन्तु बकबक करती रहती और दूसरों के काम में
१४ दखलअंदाज़ी करती हैं और अनुचित बातें बोलती हैं। **इसलिए** मैं यह चाहता हूं कि जवान विधवाएं विवाह करें; और बच्चों

अध्याय ५

५:१-२ मसीह ने जिस पास्टर को कलीसिया के ऊपर देखरेख करने वाला ठहराया है, उसके पास अधिकार है। उसे एक तानाशाह के समान मण्डली पर शासन नहीं करना चाहिये। उसे यह जानना चाहिये कि कलीसिया एक परिवार और घर के समान है - ३:१५ और उसी के आधार पर व्यवहार करे।

५:३ - पास्टर और मण्डली का यह उत्तरदायित्व हैं, कि मण्डली के निर्धनों की देखरेख की जाए। यह उस समय अधिक है जब ऐसी निर्धन विधवाएं हैं जिनके पास कोई साधन नहीं है, या कार्य नहीं कर सकतीं।

५:४ - बच्चे और नाती-पोते की जो ज़िम्मेदारी बूढ़े लोगों के प्रति है, उस पर ध्यान दें।

जैसा परमेश्वर को पसंद है, उस प्रकार से जीवन बिताकर परमेश्वर के प्रति अपने समर्पण को दिखाएं। यह प्रत्येक विश्वासी के लिये कितना महत्वपूर्ण है। हमें न केवल सच पर भरोसा करना चाहिये, किंतु निकटवर्ती लोगों के मध्य उसका अभ्यास भी करना चाहिये। परमेश्वर की कही हुई बातों को हमें न केवल जानना चाहिये, जो कुछ उन्होंने कहा है, वह करना भी चाहिये । परमेश्वर को प्रसन्न करने का यही एक तरीका है। यदि बच्चे या नाती-पोते जो विधवा की सहायता कर सकते हैं, और नहीं करते, वे परमेश्वर के विरोध में दुष्टता कर रहे हैं।

"हक्क देना सीखें" - बच्चे सोच सकते हैं कि माता-पिता के प्रति हमारी कोई ज़िम्मेदारी नहीं है, किंतु इस विषय पर परमेश्वर के विचार भिन्न हैं ।

५:५ - पौलुस मसीही विधवाओं के विषय कह रहा है। यदि वे आवश्यकता में हैं और उनकी सहायता करनेवाला कोई नहीं है, तब कलीसिया के किसी व्यक्ति को उनकी सहायता करनी चाहिये। दूसरों की आवश्यकता पूरी करने का यह एक तरीका है ।

५:६ - *"जीते जी मर गई है"* - इसका अर्थ है कि ऐसा व्यक्ति परमेश्वर के जीवन से अलग है, आत्मिक मृत्यु की दशा में है (इफि. २:१; ४:१२) । यह मात्र उन सभी विधवाओं के बारे में सच नहीं है, जो भोगविलास में जीती हैं, किंतु सब के बारे में जो ऐसा करता है । चाहे कोई जीवित दिखता है, यदि मसीह में नहीं है, तो मरा हुआ है। जो लोग परमेश्वर के बजाए भोगविलास के लिये जीवित हैं, यह सोच सकते हैं, कि वे जीवित हैं लेकिन ऐसा नहीं है । देखें यिर्म. १७:६ ।

५:७ - *"विश्वास"* - यहां इस शब्द का प्रयोग पौलुस मसीही विश्वास और जीवन के लिये करता है। इसका केन्द्र प्रेम है। यदि कोई प्रेम में नहीं चलता, तो वह मसीह का इंकार कर रहा है (१ यूह. ३:१६-१८; ४:७,८)। मसीह का इंकार करने वाले बहुत से अविश्वासी भी अपने ज़रूरतमंद रिश्तेदारों की देखभाल करते हैं। क्या मसीह के शिष्य अपनी इस ज़िम्मेदारी से किनारा कर सकते हैं ?

५:९,१० - *"नाम लिखा जाए"* - पौलुस यह नहीं कर रहा है कि ६० से कम आयु की विधवाएं जो आवश्यकता में हैं, उनकी सुधि नहीं लेनी चाहिये। यह भी नहीं कि ऐसी विधवा जो आवश्यकता रहने के बावजूद यदि इन शर्तों को पूरा नहीं करती है, उसकी सहायता नहीं की जानी चाहिये। इसलिये इस सूची में जिन विधवाओं की बात की गई है, ये वे हैं, जिन्हें किसी सेवा के लिये नियुक्त किया गया है। इन विधवाओं को कुछ शर्तों को भी पूरा करना चाहिये, जैसा अगुवे और सेवकों को कलीसिया की कुछ शर्तें पूरी करनी हैं (३:१-१२) ।

५:११-१२ - सूची में जिन विधवाओं के नाम हैं, उन्हें मसीह के प्रति समर्पित और सेवा के लिये कलीसिया द्वारा अलग किया जाना चाहिये। पुनर्विवाह बुरा नहीं है, किंतु मसीह की सेवा के लिये समर्पित विधवाएं यदि फिर से विवाह करें, तो वे पूरी तरह से सेवा नहीं कर पाएंगी या फिर सेवकाई छोड़ देंगी । जिस कार्य को करने की प्रतिज्ञा की गई है, यदि उसे छोड़ दिया जाए तो यह एक छोटा अपराध नहीं है । इस कारणवश ऐसी विधवाओं पर परमेश्वर का दण्ड आ सकता है ।

५:१३ - यही कारण है कि नवजवान विधवाओं को कलीसिया में सेवकाई के लिये नियुक्त नहीं किया जाना चाहिये ।

५:१४ - पौलुस कह रहा है कि जवान विधवाओं के लिये बेहतर है कि वे फिर से विवाह करें, बजाए इसके कि कलीसिया की सेवा के लिये समर्पण

१५ को जन्म दें और घरबार संभालें, और किसी विरोधी को बदनाम करने का अवसर न दें।**क्योंकि** कई एक तो बहककर शैतान
१६ के पीछे हो चुकी हैं। **यदि** किसी विश्वासिनी के यहां विधवा हो, तो वही उनकी सहायता करे, कि कलीसिया पर भार न हो;
१७ ताकि कलीसिया उनकी सहायता कर सके, जो सचमुच विधवाएं हैं। **जो** अगुवा अच्छा प्रबन्ध करते हैं, विशेष करके वे जो वचन
१८ सुनाने और सिखाने में परिश्रम करते हैं, दो गुने आदर के योग्य समझे जाएं। **क्योंकि** पवित्र बाईबल कहती है कि दांवनेवाले
१९ बैल का मुंह न बान्धना, क्योंकि मज़दूर अपनी मज़दूरी का हक्कदार है। **यदि** कोई दोष किसी प्राचीन पर लगाया जाए, तो बिना
२०,२१ दो या तीन गवाहों के न सुनो । **अपराध** करनेवालों को सब के सामने समझा दो, ताकि और लोग भी डरें। **परमेश्वर**,
और मसीह यीशु, और चुने हुए स्वर्गदूतों को उपस्थित जानकर मैं तुम्हें चेतावनी देता हूं कि तुम मन खोलकर इन बातों को
२२ माना करो, और कोई काम पक्षपात से न करो ।**किसी** पर शीघ्र हाथ न रखना और दूसरों के पापों में भागी न होना। अपने
२३ आपको पवित्र बनाए रखो। **भविष्य** में केवल जल ही पीनेवाले न रहो, पर अपने पेट के खराब होने और अपने बार बार
२४ बीमार होने के कारण थोड़ा थोड़ा अंगूर का रस भी काम में लाया करों । **कितने** मनुष्यों की दुष्टता प्रगट हो जाती है, और
२५ न्याय के लिए पहले से पहुंच जाती है, लेकिन कुछ के साथ ऐसा नहीं होता, उनकी बुराई बाद में दिखती है ।**वैसे** ही कितने

करें, प्रतिज्ञा तोड़ें और फिर सेवा छोड़कर विवाह करें ।

"शत्रु" - जो मसीह या कलीसिया के विरोध में है। इस प्रकार के लोग मसीहियों की आलोचना करने और उनमें कमी ढूंढ़ने का प्रयत्न करते हैं । मसीहियों को ऐसा अवसर नहीं देना चाहिये ।

५:१५ - ऐसा लगता है कि कुछ विधवाओं ने कलीसिया में सेवा के लिये अपना वचन दिया था, किंतु बाद में यौन इच्छाओं की गुलाम बन गईं (पद ११) और सेवा छोड़ दी ।

"शैतान के पीछे" - परमेश्वर की इच्छा को तुच्छ जानकर, शारीरिक अभिलाषाओं के पीछे जाने से वे शैतान की सेवा कर रही थीं । इस संसार के आमोद-प्रमोद और दुष्टता के पीछे जाना अपने सबसे बड़े शत्रु के पीछे जाना है। १ इति. २१:१ और मत्ती ४:१,२ में शैतान पर नोट्स देखें ।

५:१६ - जो स्त्रियां उनके सगे संबंधियों में विधवाओं की सहायता करने के योग्य हैं, उन्हें लोगों के समान ज़िम्मेदारी लेनी है। पद ४ और ८ से तुलना करें ।

५:१७ - *"दुगने आदर"* - अगला पद दिखाता है कि पौलुस का मतलब आर्थिक सहायता के साथ दूसरे प्रकार के सम्मान से भी है ।

५:१८ - व्यवस्था. २२:४; लूका १०:७; १ कुरिं. ९:९-१२।

५:१९- कभी-कभी मसीह का एक निर्दोष सेवक कुछ गलत कार्य के लिए या किसी और बात के लिये दोषी ठहराया जाता है। यदि दूसरे लोग इस बात पर विश्वास कर लें, तो उसकी सेवा प्रभावित हो सकती है। इसलिये पौलुस यहां पर बुद्धिमानी की सलाह देता है ।

"दो या तीन" - मरकुस १९:१५; मत्ती १८:१६; २ कुरिं. १३:१ ।

५:२० - कलीसिया की शुद्धता और पवित्रता बनाए रखने के लिये अनुशासन की आवश्यकता है, यदि पाप का साम्हना करके सार्वजनिक रीति से डांट न लगाई जाए तो वह मण्डली को नाश कर सकती है। प्रेरित ५:१-११; १ कुरिं. ५:१-५,१३; मत्ती १८:१५-१७। परमेश्वर के लोगों के मन में पाप के प्रति भय उत्पन्न करने के लिये सबके साम्हने उसका खुलासा करना चाहिये । हालांकि यह कार्य सावधानी से साथ करने के साथ-साथ दोषी व्यक्ति के प्रति परमेश्वरीय प्रेम को भूलना नहीं चाहिये ।

५:२१ - यहां पौलुस कितना ज़ोर डालकर लिखता है। वह जानता था कि कलीसिया में पक्षपात करना एक आम बात है। बहुत से कलीसिया के अगुवे पाप करने वाले रिश्तेदारों और निकट के मित्रों के पाप को ढांकने का प्रयत्न करते हैं। जबकि साम्हने लाकर डांटे जाने की आवश्यकता है । दूसरे लोगों के साथ वे निर्दयता का व्यवहार करते हैं। यह बिलकुल गलत है और इससे कलीसिया की हानि हो सकती है । पौलुस की सलाह को प्रत्येक मसीह के सेवक को मानना चाहिये ।

५:२२ - *"हाथ"* - ४:१४; २ तीमु. १:६। पौलुस शायद अगुवों और सेवकों की नियुक्ति के विषय कह रहा है। यदि बिना परखे हुए इन लोगों की नियुक्ति अगुवों और सेवकों के रूप में की जाती है, जो कि पाप में जीवन बिता रहे हैं, तो नियुक्ति करने वाले ज़िम्मेदार होंगे। मण्डली के अगुवों को स्वयं पवित्र जीवन जीने के साथ पवित्र जीवन जीने वालों को ही नियुक्त करना चाहिये ।

५:२३ - *"बार बार बीमार होने के कारण"* - विश्वासियों की बीमारी और चंगाई के विषय में बात करते समय इन पदों पर ध्यान दिया जाना चाहिये । २ तीमु. ४:२; फिलि. २:२७; २ कुरिं. १२:७-१० से तुलना करें। यह संभव है कि तिमोथी की शारीरिक समस्या अशुद्ध पानी पीने से थी। ऐसी स्थिति में थोड़ा सा अंगूर का रस मिलाकर पीना लाभकारी होता। उन दिनों पीने के पानी में थोड़ा सा पुराना अंगूर का रस मिलाना एक आम बात थी। यहां ध्यान दें शब्द 'थोड़ा' देखें ३:३,८; उत्पत्ति ९:२१; नीति. २०:२; २३:३०,३१ ।

५:२४,२५ - कभी कभी लोगों के साम्हने न हमारे अच्छे कार्य और न बुरे कार्य दिखाई पड़ते हैं। कुछ समय के लिये मनुष्य गुप्त पापों को या अच्छे कार्यों को किया करते हैं (भजन. ९:८; समा. १२:१४; मत्ती ६:१-४)। इस कारणवश कलीसिया के अगुवों को अध्यक्ष या सेवक नियुक्त करते समय सावधानी बरतनी चाहिये। जो कुछ लोग करते हैं, वह सब अन्त में प्रगट किया जाएगा - मत्ती १०:२६; लूका ८:१७; १२:२,३; रोमि. २:१६; १ कुरिं. ४:५ ।

६ भले काम भी प्रगट होते हैं, और जो ऐसे नहीं होते, वे भी छिप नहीं सकते ।**जितने** दास गुलामी के बन्धन में हैं, वे अपने
२ अपने मालिक को बड़े आदर के योग्य जानें, ताकि यहोवा के नाम और उपदेश की निन्दा न हो। **और** जिनके स्वामी विश्वासी
हैं, इन्हें वे भाई होने के कारण तुच्छ न जानें, बल्कि उनकी और भी सेवा करें, क्योंकि इससे लाभ उठानेवाले विश्वासी और
३ प्रेमी हैं । इन बातों के विषय में उपदेश दिया करो और समझाते रहो। **यदि** कोई और ही तरह का उपदेश देता है, और खरी
४ बातों को, अर्थात् हमारे प्रभु यीशु मसीह की बातों को और उस उपदेश को नहीं मानता, जो भक्ति के अनुसार है । **ऐसा**
व्यक्ति अभिमानी हो गया है, और कुछ नहीं जानता, वरन् उसमें विवाद और शब्दों पर तर्क करने का स्वभाव है । इस
५ स्वभाव के कारण डाह, और झगड़े, और निन्दा की बातें, बुरे बुरे सन्देह **और** उन मनुष्यों में व्यर्थ रगड़े झगड़े उत्पन्न होते
६ हैं । जिनकी बुद्धि बिगड़ गई है और वे सत्य से खाली हो गए हैं, जो समझते हैं कि मसीही सेवा कमाई का तरीका है। **परंतु**
७,८ शान्ति के साथ आत्मिक जीवन बड़ी कमाई है। **क्योंकि** न हम जगत में कुछ लाए हैं और न कुछ ले जा सकते हैं। **यदि** हमारे

अध्याय ६

६:१ - इफि. ६:५,६ (नोट्स), कुलु. ३:२२; तीतुस २:९; १ पतरस २:१८ ।

"ज़िन्दा" - यदि मसीही सेवक या गुलाम अपने मालिक या स्वामी के प्रति आदर न दिखाए, किंतु बलवा करें तो लोग सोच सकते हैं कि मसीही समाज में यह अनुमति है । इस प्रकार मसीही नौकरों द्वारा जिस परमेश्वर की आराधना की जाती है, उसकी निन्दा होगी ।

६:२ - यह संभव है कि मसीही गुलाम एवं सेवक अपने स्वामी को भला समझकर अपने काम में ढीले हो सकते हैं। किसी भी कार्य में किसी भी मसीही को ऐसा करना शोभा नहीं देता है।

"भाई" - जब एक स्वामी एवं नौकर (गुलाम) मसीह पर विश्वास लाता है, तो वह आत्मिक भाई है।

"प्रेमी" - क्या गुलामों के लिये यह संभव है कि वे अपने स्वामी से प्रेम रखें ? हाँ, मसीह में यह संभव है-गल. ३:२८; कुलु. ३:११। यूहन्ना १३:४४ में मसीह की आज्ञा सभी विश्वासियों को सभी परिस्थितियों में प्रेम करने की दी गई थी ।

६:३-४ - यदि कोई .... अनुसार है - १,३,१०,११; ४:१। यहाँ उन लोगों के बारे में लिख रहा है जो मात्र नाम से मसीही कहलाते हैं, किंतु यह दूसरों पर भी लागू होता है। जिस सत्य को उसने प्रेरितों पर प्रगट किया था, उसी की आवश्यकता पर वह जोर डाल रहा है। कुछ लोग कहते हैं कि उनकी बुद्धि और ज्ञान इन सिद्धांतों पर उन्हें विश्वास करने से रोकता है। सच तो यह है कि जिस कारणवश लोग मसीह के सत्य को अस्वीकार करते हैं वह अधिक ज्ञान नहीं है। किंतु कम जानना है। वे अधिक शिक्षित हो सकते हैं, किंतु अधिक बातों में उनके पास कुछ समझ नहीं है। वे अंधकार और अज्ञानता में हैं - यूहन्ना ३:१,९,२०, १ कुरिं. १:१८-२२; २ कुरिं. ४:४; इफि. ४:१८ । हालांकि उनके पास बुद्धि की शुरूआत ही नहीं है (नीति. १:७), वे घमण्डी हैं और सोचते हैं कि बुद्धिमान हैं ।

"तर्क करने का रोग" - जो लोग आत्मिक रीति से रोगी हैं, पौलुस उनकी स्थिति के विषय में बता रहा है। परमेश्वर का वह सत्य जो उन्हें ठीक कर सकता है, उसे ग्रहण करने के बजाए वे सत्य के विरोध में लड़ने के लिये तैयार हो जाते हैं ।

६:५ - *"बुद्धि बिगड़ गई है"* - २ तीमु. ३:८। एक मन जो परमेश्वर के सत्य का विरोध करता है, आत्मिक बातों के विषय में ठीक रीति से नहीं सोचता है । एक बड़ी आशीष, एक नया मन है, जो मसीह हमें देते हैं (रोमि. १२:२; कुलु. ३:१०) ।

"सत्य से खाली" - सत्य उनके साम्हने था। उन्होंने इस सत्य पर विश्वास किया। किंतु उन्होंने शैतान को मौका दिया कि वह उनके हृदयों से सत्य को चुरा ले जाए। तुलना करें मत्ती १३:१८,१९ । ध्यान दें कि वे लोग जो मसीही कहलाते हैं, अपने भ्रष्ट मनों को प्रगट करते हैं - उनके लिये मसीही होने का दावा करना, दूसरों से धन प्राप्त करने का दूसरा कोई लाभ प्राप्त करने का साधन होता है । प्रेरित.८:१८-२५; यूहन्ना १२:६; २ पतरस २:१५; यहूदा ११ । जो कुछ उनके पास है उसे मसीह के लिये छोड़ने के बजाए (लूका १४:२५ -२७,३३; फिलि. ३:८), वे मसीह के लोगों से जो कुछ प्राप्त कर सकते हैं, उसे लेना चाहते हैं। यह एक भयंकर बात है कि ऐसा मन मसीही कलीसियाओं और संस्थाओं के लोगों में होता है। कुछ लोग धन प्राप्त करने के लिये झूठ बोलते, चुराते हैं और धोखा देने के लिये भी तैयार हो जाते हैं ।वे यह भूल गए हैं (यदि उन्हें कभी याद था) कि झूठा होने से बेहतर निर्धन होना है (नीति. १९:२२) ।

६:६ - फिलि. ४:११,१२; इब्रानियों १३:५। मसीह के विश्वासी को पहले भौतिक वस्तुओं में नहीं, किंतु आत्मिक बातों में धनी होना चाहिये । इसी में उनका अनंतकालीन लाभ (मत्ती ६:१९-२१) है। परमेश्वर पर भरोसा रखने से संतोष मिलता है। संतुष्ट रहने का मार्ग यह है कि हम भरोसा करें कि परमेश्वर ने हमें सर्वोत्तम स्थान, पद और परिस्थिति में रखा है। उन्होंने हमें वह सब दिया है, जिसकी हमें आवश्यकता है, न कम, न अधिक । संतोष हमें शिकायत करने और लोभी इच्छाओं (जो मूर्ति पूजा के बराबर है) के पीछे जाने से बचाता है - इफि. ५:५; कुलु. ३:५ । इससे हम भौतिक वस्तुओं के द्वारा नियंत्रित नहीं किये जाएंगे। परमेश्वर के जन के लिये संतोष एक आवश्यक तत्व है । संतोष नहीं रखना हमारे प्रति परमेश्वर के मार्गों और व्यवहार की आलोचना करना है। यह परमेश्वर के प्रति कुड़कुड़ाने से पाप की ओर ले जाता है (यिर्म. १४:११,१२; १५:२२-२४; १६:२,३,८; गिनती १४:३) ।

६:७ - अय्यूब १:२१; भजन ४९:१६-२०; सभोपदेशक ५:१५। पृथ्वी पर रहते समय हम जिन बातों को स्वर्ग भेजते हैं, वे ही हमारे लिये बचत हैं (मत्ती ६:१९-२६) ।

६:८ - पौलुस का अर्थ उन बातों से है जो जीवन के लिये सचमुच में आवश्यक हैं। यहाँ वह अपने घर होने तक की बात नहीं करता है - संभवतः इसलिये कि इस पृथ्वी पर व्यक्ति सारे जीवन भर बिना घर के रह सकता है ।

९ पास खाने और पहनने को हो, तो इन्हीं पर सन्तोष करना चाहिए। **परंतु** जो अमीर होना चाहते हैं, वे ऐसी परीक्षा, और फंदे
१० और बहुत सी बेकार की और हानिकारक लालसाओं में फंसते हैं, जो मनुष्यों को बिगाड़ देती हैं और विनाश के समुद्र में
डुबा देती हैं। **क्योंकि** रुपये का लोभ सब प्रकार की बुराइयों की जड़ है, जिसे प्राप्त करने का प्रयत्न करते हुए कई लोग
११ विश्वास से भटक गए और अपने आप को विभिन्न प्रकार के दुखों से पीड़ित कर दिया है। **परंतु** हे परमेश्वर के जन, तुम
१२ इन बातों से भागो; और धर्म, भक्ति, विश्वास, प्रेम, धीरज और नम्रता का पीछा करो। **विश्वास** की अच्छी कुश्ती लड़ो; और
१३ उस अनन्त जीवन को थाम लो, जिसके लिए तुम्हें बुलाया गया, और बहुत गवाहों के सामने अच्छा अंगीकार किया था। **मैं**
तुम्हें परमेश्वर को जो सब को जीवित रखते हैं, और मसीह यीशु को गवाह करके, जिन्होंने पुन्तियुस पीलातुस के सामने अच्छा
१४ अंगीकार किया, यह आज्ञा देता हूं, **कि** तुम हमारे स्वामी यीशु मसीह के प्रगट होने तक इस आज्ञा को निष्कलंक और निर्दोष
१५ रखो। **इसे** वह ठीक समयों में दिखाएंगे, जो परमधन्य और मात्र शासक और राजाओं के राजा, और अधिकारियों
१६ के अधिकारी हैं। **और** अमरता केवल उन्हीं की है, और वह अगम्य ज्योति में रहते हैं, न उन्हें किसी मनुष्य ने देखा,

---

६:९ - लोग (यहाँ तक कि कुछ मसीही विश्वासी) सोच सकते हैं कि धन के पीछे दौड़ते चले जाना बुद्धिमानी है। किंतु ऐसे लोग सच में ध
ोखे में हैं और सर्वनाश के रास्ते में हैं। धन की लालसा शैतान द्वारा लाया गया जाल है, एक परीक्षा जो हमें नाश करने के लिये है।
यह इच्छा कभी भी संतोष नहीं लाती है। किंतु जैसे जैसे वस्तुएं बढ़ती जाती हैं, यह बढ़ती जाती है और अंत में बरबादी लाती है (मत्ती ७:१३; २ थिस्स. १:८,९; भजन ४९:२०; ६३:१८,१९)। इसके कुछ उदाहरण देखें - बालाम (२ पतरस २:१५), गेहजी (२ राजा ५:२०-२७), यहूदा (मत्ती २६:१४-१६; यूहन्ना १२:४-६)। क्या हम भी उन्हीं के समान नाश हो जाना चाहते हैं? यदि नहीं, तो उनके समान अपनी इच्छाओं को अपना जीवन वश में करने न दें ।

६:१० -धन का प्रेम सारी बुराइयों की जड़ है। क्योंकि यह परमेश्वर और आत्मिक बातों से हमारे ध्यान को हटाकर भौतिक बातों में लगा देता है ।मत्ती ६:२२-२४। धन से प्रेम परमेश्वर से घृणा करना है। यदि हम मत्ती २२:३७ में दी गई आज्ञा को मानें तो हमारे हृदय में धन के प्रति कोई स्थान नहीं होगा। दूसरी ओर, यदि हम धन के प्रेम को अपने ऊपर शासन करने देंगे, तो हमारे हृदय परमेश्वर के प्रति प्रेम के लिये कोई स्थान न होगा। अनेक बुराइयों में एक (सबसे प्रमुख) दुष्टात्माओं के रूप में यहूदा इस्करियोती को भी धन के प्रेम ने गिराया (यूहन्ना ६:७०,७१; १२:६; मत्ती २६:१४-१६) ।

"विश्वास से भटक कर" - पद २१; १:१९; ४:१; ५:८। जिन लोगों के लिये धन उनका परमेश्वर है, उन्हें मसीह के रास्ते को अपनाने की कोई इच्छा नहीं होगी। वे अपनी अपनी राह ले लेंगे ।

"दुखों से छलनी" - धन के पीछे भागना और दुख और क्लेश के पीछे जाना एक ही बात है। संपत्ति अपने प्रेमियों को दुख, असंतुष्टता, अनंत हानि और बर्बादी देती है। याकूब ५:१-३; मत्ती १६:२२; ६:२४,२५; १२:१६-२१ और १६:१९-३१ देखें ।

६:११ - मसीही के प्रत्येक सेवक को धन संपत्ति की परीक्षा से भागना चाहिये। यदि ऐसा नहीं होता है तो वे शैतान के चंगुल में फंस जाएंगे (पद ९)। हम सभी अपनी पीठ उसकी ओर करें और उस धन संपत्ति की - परमेश्वर के आत्मा के फल (गलतियों ५:२२,२३) लालसा करें को जिसकी बात पौलुस करता है । यदि हम ऐसा करेंगे तो हमें जीवन की आवश्यकताओं के विषय में परेशान नहीं होना पड़ेगा (मत्ती ६:२३; फिलि. ४:१९)। हमें संतोष भी मिलेगा।

६:१२ - *"कुश्ती"* - इफि. ६:१०-१८; १ कुरि. ९:२६; २ तीमु. ४:७।

"थाम लो" - अनंत जीवन की आशीषें परमेश्वर ने हमारी पहुंच में रखी हैं और हमें उन्हें अपने लिए ले लेना चाहिए। सही मसीही जीवन सत्य जीवन है, बिना उद्देश्य का नहीं। परमेश्वर ने हमें मसीह में तमाम आशीषें दी हैं (इफि. १:३)। अवश्य है कि हम उन्हें जानें, ले लें और लाभ उठाएं ।

"अनंत जीवन" - पद १८ और ३:१६ पर नोट्स देखें ।

"अच्छा अंगीकार" - मत्ती १०:३२,३३; रोमि. १०:९,१०; १ यूहन्ना ४:१५ से तुलना करें ।

६:१३ - ५:२१। *"जीवित रखते हैं"* - प्रे. काम १७:२५।

"पिलातुस" - मत्ती २७:२। यूहन्ना १८:३६,३७ में मसीह द्वारा दिए गए अंगीकार को देखें।

६:१४ - *"आज्ञा"* - शायद पौलुस का अर्थ उस संपूर्ण जीवन से है जिसे प्रभु ने शिष्यों के लिए नियुक्त किया है। निश्चित रीति से ११,१२ पद में वही विषय है।

"यीशु मसीह के प्रगट होने"- यीशु मसीह के दोबारा आने (२ तीमुथि.४:१,८; तीतुस २:१३; इब्रा. ९:२८; मत्ती २४:३०,३१; प्ररित १:११)।

६:१५ -*"ठीक समय"* - मत्ती २४:३६। तुलना करें गल. ४:४; यूहन्ना ७:३०। जो कुछ भी परमेश्वर करते हैं, उसके लिए उनके पास एक समय है। यहां पौलुस परमेश्वर को एक "सारी सृष्टि के शासक, राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु कहता है।" प्र. वाक्य १:७ में लिखा है कि प्रभु यीशु पृथ्वी के राजाओं के अधिपति हैं और प्र. वाक्य १९:१६ में उन्हें "राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु" कहा गया है। क्या यहां कोई विरोधाभास है? बिल्कुल नहीं। स्पष्ट बात यह है कि यीशु परमेश्वर हैं और संसार में शरीर रूप धारण कर आए। यूहन्ना १:१,१४; फिलि. २:६ आदि पद देखें ।

६:१६ - १:१७ देखें। *"ज्योति"* - १ यूहन्ना १:५; यूहन्ना १:४,५ ।

१७ और न कभी देख सकता है । उनकी प्रतिष्ठा और राज्य युगानुयुग रहेगा। ऐसा ही हो। **इस** संसार के धनवानों को आज्ञा
दो, कि वे अभिमानी न हों और चंचल धन पर आशा न रखें, परन्तु परमेश्वर पर आशा रखे, जो हमारे सुख के लिए सब
१८ कुछ बहुतायत से देते हैं। **भलाई** करें, और भले कामों में धनी बनें । साथ ही साथ उदार और सहायता करने में आगे
१९,२० हों। **और** भविष्य के लिए एक अच्छी नींव डाल रखें, कि सत्य जीवन का पालन करें। **हे तीमुथियुस**, जो शिक्षा तुम्हें
सौंपी गई है, उसकी रखवाली करो, और जिस ज्ञान को ज्ञान कहना ही भूल है, उसके अशुद्ध बकवाद और विरोध की
२१ बातों से दूर रहो। **बहुत से लोग** इस ज्ञान का अंगीकार करके, विश्वास से भटक गए हैं। तुम पर असीम कृपा बनी रहे ।

६:१७ - यह संभव है कि धनी यह सोचने लगें कि उन्हें परमेश्वर की आवश्यकता नहीं है। तुलना करें भजन ४९:६; ७३:३-१२।

"चंचल धन" - नीति. २३:४,५; २८:२०। जो कुछ परमेश्वर ने मनुष्य को प्राप्त करने के योग्य बनाया है, वह सब उससे ले सकते हैं। जो लोग परमेश्वर पर ध्यान नहीं देते, उनके साथ यही होना अच्छा है ।

"बहुतायत से देते हैं" - २ कुरि. ९:८; फिलि. ४:१९। परमेश्वर कंजूस नहीं कि अपने पास रखे रहें। जो कुछ हम आंखों से देखते हैं, लोग या भौतिक वस्तुएं, उन पर हमारी आशा और भरोसा नहीं होना चाहिए ।

"सुख के लिए" - सभो. २:२४-२६; प्रे. काम १४:१७। जो कुछ परमेश्वर ने लोगों को दिया है, वह चाहते हैं कि वे उसका आनंद उठाएं। वह नहीं चाहते हैं कि वे उनका आनंद उठाना बुरा समझें। इसका यह अर्थ नहीं कि जब दूसरे निर्धनता में हैं, हम अनाप-शनाप पैसा उड़ाएं। २ कुरि. ८: १३,१४ ।

६:१८,१९ - मत्ती १९:२१; ६:१९,२०; लूका १४:३३; लूका १२:२१।

"भले कामों में धनी" - भले काम सच्चा आत्मिक धन हैं । तुलना करें २५:१९; लूका १६:१५; २ कुरि. ९:१५। जो लोग अपना धन केवल अपने ऊपर खर्च कर रहे हैं, वे सच पूछें तो फेंक रहे हैं।

"उदार और सहायता देने में तत्पर" - अभी हम जो करते हैं, देते हैं, उन सब का हमारे अनंत भविष्य पर प्रभाव है । मत्ती २५:१९; लूका १६:१५ इन वचनों से तुलना करें। यह बड़े दुख की बात है कि बहुत से लोग जो अपने धन से कुछ कर सकते थे, अपने लिए उपयोग करते हैं, या ऐसी बातों पर जिनका कुछ अनंत मूल्य नहीं है। २ कुरि. ९:१५ में देने के विषय पर कुछ पद देखें ।

६:२० - *"उसकी रखवाली करो"* - २ तीमुथि. २:१४। परमेश्वर के वचन की जिन सच्चाइयों को परमेश्वर ने प्रगट किया, पौलुस उन बातों के विषय कह रहा है। उन बातों को उसे बहुत कीमती समझना चाहिए और देखना है न शैतान और न कोई, उन्हें हम से ले ले ।

"ज्ञान को ज्ञान कहना ही भूल है" - पद ३,४; कुलु. २:८; १ कुरि. १:१७-२५ ।

६:२१ - *"अंगीकार करके"* - रोमि. १:२२ से तुलना करें। कुछ लोग दावा करते हैं कि बड़े बुद्धिमान हैं और उन्हें सुसमाचार की आवश्यकता नहीं है। वे बर्बादी की सीमा पर हैं ।

"विश्वास से भटक गए हैं" - पद १४; ४:१।

"असीम कृपा" - मसीह का सेवक केवल परमेश्वर के अनुग्रह से ही उन बातों को अपने जीवन में लागू कर सकता है जो इस पत्र में दी गई हैं।